ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के शोध पत्रों के लेखन का उद्देश्य, महत्व एवं चुनौतियाँ

ए.के. सर्राफ
प्राचार्य
एकलव्य महाविद्यालय
झालावाड़, राजस्थान

सारांश

ग्लोबलाइजेशन के कारण विश्व बहुत छोटा हो गया है। कहीं न कहीं सभी देश एक दूसरें से जुड़ने को मजबूर हो गये है– क्योंकि दुनियां के लगभग सभी देशों की समस्यायें, चाहे वह राजनैतिक हो, आर्थिक हो, सामाजिक हो, शैक्षणिक हो, सैन्य समस्या हो या मनोवैज्ञानिक सभी समस्याये लगभग एक सी ही है। अतः अब आवश्यक ही नहीं वरन अनिवार्य हो चुका है कि सभी उक्त समस्याओं का समाधान हो जिससे विश्व में जहाँ शान्ति हो वहीं विश्व जन सुखी और आनन्दमय हो।

मुख्य शब्द – अनुसंधान, नई खोज, सृजन, शिखर, अर्न्तराष्ट्रीय स्तर वैज्ञानिक सोच, परिकल्पना, स्तरीय, सर्वेक्षण, ग्लोबलाईजेशन।

प्रस्तावना

दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि अब विश्व वास्तव में ही एक परिवार की तरह ही हों गया है। भारत की विश्व बन्धुत्व की भावना को साकार रुप देने का अब समय आ चुका है।

इसके लिये जरुरी है कि विज्ञान का क्षेत्र हो आर्थिक क्षेत्र हो, सामाजिक विज्ञान का क्षेत्र हों सभी में शोध की आवश्यकता है। वैज्ञानिक सोच, नये–सभी में शोध की आवश्यकता है। वैज्ञानिक सोच, नये–अनुसंधान हो "शोध" Research वास्तव में यह नहीं है कि विश्व की समस्याओं मानव समस्याओं को पुराने ढ़र्रे द्वारा समाधान किया जाये।

अतः जरुरी है कि प्रत्येक क्षेत्र में नई खोज अनुसंधान (Research) की जाये और जो भी Research Paper (शोध–पत्र) तैयार किये जाये वो केवल एकत्रित सामग्री (मेटर) नहीं हो। वैज्ञानिक आधार पर उनका सृजन हो जिससे शोध पत्रों एवं शोध का नया स्वरुप विश्व के सामने उभर कर आये। सरकार नीतियाँ बनाते समय किये गये शोध के आधार पर जन समस्याओं निवारण करने वाली नीतियाँ एवं कानून बनाये–जिससें देश का कल्याण हो साथ ही विश्व का कल्याण हो। विश्व तेजी से उन्नति के शिखर पर पहुँच सके।

स्पष्ट है कि शोध पत्र लेखन अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का तब ही हो सकता है जब शोधकर्त्ता का विस्तृत दृष्टिकोण हो। उसे इस बात का अहसास हो– कि मेरी खोज (Search) से, मेरे शोध पत्र (Rearch Paper) से विश्व जन का कल्याण होना है उसकी समस्याओं का निवारण होना है।

शोध पत्र लेखन को अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का शोध पत्र तैयार करने में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अनेक चुनौतियाँ ऐसी है– जिससे निपटने के लिये लेखक को अनेक कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है। जैसे– वैज्ञानिक आधार सामग्री का अभाव, पुस्तकालयों का उच्च स्तरीय न होना, जब तक पठन, पाठन, डिस्कशन अनर्तराष्ट्रीय स्तर का नहीं होगा–स्वयं के विचार नहीं बनेगे। नवीन विचारों का सृजन नहीं होगा।

खोज के बाद शोध पत्र तैयार हो उसे सही मंच मिले जिससे उसका शोध अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुँच सके और उससे प्ररित होकर नीतियों में कानूनों में परिवर्तन हो सके। दूसरी बड़ी चुनौती– सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में विषय वस्तु का पर्याप्त न होने के साथ लेखनकर्त्ता का वैज्ञानिक सोच न होना है।

शोध पत्र अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का तब ही हो सकता है– जब पुराने मापदण्डों में परिवर्तन करने की इच्छाषक्ति एवं साहस शोध पत्र लिखते समय विश्व बन्धुत्व की भावना हो और उसे ध्यान में रखकर शोध पत्र तैयार हो। समस्याओं का हल निकालने, नवीन जानकारी नई खोज जनग्राही बनाने की सामर्थ शोध पत्र में हो।

शोध की विभिन्न पद्वतियों का प्रयोग, शोध पत्र लेखन में हो। वैज्ञानिक, समकालीन नये विचार करते समय स्तरीय बनाने में दिक्कत तो होती है। विज्ञान के शोध पत्र लेखन में विषय सामग्री, लैब का स्तरीय न होना, परिणाम स्पष्ट न निकलना आदि समस्यायें बाधक है।

इन सब कठिनाईयों के बावजूद शोध पत्र अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के बन सकते है और ऐसे स्तरीय पत्र समकालीन परिस्थितियो एवं समय की माँग है। आज आवश्यकता ही नहीं वरन नितांत आवश्यक हो चुका है कि शोध पत्र स्तरीय हो, अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के हो जिससे भारत के शोधकर्त्ता, शोध पत्र लेखन, पुरानी मान्यतायें त्याग कर नई सोच रखे, वैज्ञानिक आधार पर लेखन करे, समस्याओं के निवारण के लिये, नवीन विचार, नये सिद्वांत, नई नीति, नये कानून का सृजन करे, जिससे विश्व के देश उसे अपनाकर जन कल्याणकारी योजनायें बनाकर विश्व का कल्याण कर सके।

वर्त्तमान में भारत की जनता ही नहीं, जनप्रतिनिधि ही नहीं बल्कि विश्व का प्रत्येक देश भारत के शोध एवं शोध पत्रों पर नजरें टिकाये बैठा है। विश्व के लगभग हर देश भारत के शोध स्तर को जानता है। चाहे वह सामाजिक क्षेत्र, सामाजिक

समस्याये– विवाह, महिला सषक्तिकरण, नगरीयकरण, ग्रामीण उत्थान, महिलाओं का समय के साथ चलने की योग्यता, साहस, धैर्य आदि दृष्टिकोण से महिलाये श्रेष्ठ है। विश्व इसे जानता है।

इसका सबसे बड़ा कारण उनको मिले संस्कार ही है जिनकी खोज हमारे सामाजिक वैज्ञानिकों ने की, इसी शोध को हमारे शोधकर्त्ताओं के शोधपत्रों के माध्यम से अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का बनाकर विश्व की महिलाओं को बाध्य कर देना है कि वे भारत की संस्कृति, संस्कार, महिलाओं की सामर्थ और ताकत को समझे कि वे कंधा से कंधा मिलाकर पुरुष का साथ देते हुये–नवीन संस्कृति, नई शिक्षा, नई जिम्मेदारीयाँ को अपनाकर आगे बढ़ अपना वजूद कायम कर रही है।

वैज्ञानिक क्षेत्र में शोध पत्र एवं शोध में पहले यू.एस., यू.कू. का बोलबाला था परन्तु धीरे–धीरे भारत ने अपनी जगह अर्न्तराष्ट्रीय क्षेत्र में बना ली है। आर्थिक क्षेत्र, राजनैतिक क्षेत्र, मनोवैज्ञानिक क्षेत्र सभी में भारत के शोध एवं शोध पत्र स्तरीय है, जिससे विश्व प्रभावित हो रहा है। उसे अपना रहा है।

विश्व को आश्चर्य है कि आर्थिक क्षेत्र में नवीन खोज नई विचारधारा, नई नीति अपनाकर भारत कैसे विश्व स्तर पर अपना स्थान बनाये है। राजनैतिक क्षेत्र में भारत के अनुसंधान एवं अनुसंधान पत्रों की श्रेष्ठता विश्व मानता है। इसे आष्चर्य है कि भारत का प्रजातंत्र कैसे विभिन्न समस्याओं को दूर करता हुआ विकास के मार्ग पर निरन्तर अग्रसर है। वर्षो बिट्रिश एवं पुर्तगाल के अधीन रहने वाला भारत आज भी प्रजातंत्र व्यवस्था को अपनाये हुये है– जबकि उसके पड़ोसी देश एवं एशिया के अन्य देशों ने प्रजातंत्र को अपने हिसाब से विकृत कर दिया है। यह भारत का समय और परिस्थितियों के मुताबिक अपने को ढ़ालने का ही तो परिणाम है।

निष्कर्ष

भारत की सोच समकालीन है। उसका अनुसंधान, शोध, शोध पत्र स्तरीय है, परन्तु अभी भी जरुरत है कि शोधकर्त्ता, शोध पत्र लेखन परिस्थितियों के मुताबिक एवं चुनोतियों का सामना करते हुये अपने साहस, आत्मबल, जुझारु स्वभाव के चलते श्रेष्ठ कार्य, श्रेष्ठ शोध, श्रेष्ठ शोध पत्र लिखकर भारत को विश्व में विश्वगुरु के पद पर आसीन करने में सहायक होंगे। आवश्यकता सिर्फ समय के साथ चलने, जुझारुपन, आत्मविश्वास, वैज्ञानिक दृष्टिकोण की ही है।

संदर्भ ग्रथ सूची

1. *Sharma R.A. (1985) Fundamental of Educational Research.*
2. *SinghA.K. (1992) Research Methods in Psychology, SociologyAnd education.*
3. *Fariya B.L. (1995) International Relation.*
4. *Kapil H.J.K. (1996) Reading in Research Methodology.*
5. *C.R. Kothori (1988) Research Methodology.*
6. *Ranjit Kumar (1996) Research Methodology steeply step quid.*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध विधियाँ

अनिता जैन
प्राचार्या
जे0ए0वी0 गर्ल्स डिग्री कॉलेज
बड़ौत

सतत प्रवहमान जिज्ञासा और ज्ञानपिपासा ही शोध की मूल प्रेरक शक्ति है। विस्मृत तथ्य और सर्जक कल्पना के सामंजस्य से जिस प्रकार घटनाओं को पुनरुज्जीवित कर इतिहास की सृष्टि की जाती है उसी प्रकार अज्ञात अथवा अल्पज्ञात तत्वों के आधार पर किसी तथ्य, सिद्धान्त, मन्तव्य, वाद अथवा तात्विक विषय पर शोध कार्य किया जाता है। ज्ञान– विज्ञान के सभी क्षेत्रों में यह शोध संभव है। शोध कार्य किसी विषय का ऐसा सांगोपांग अनुशीलन या अध्ययन है जिसमे सोद्देश्य निरीक्षण के साथ स्थापन और व्याख्या कार्य को भी मुख्यता दी जाती है। शोध का अर्थ स्पष्ट करते हुए डा० नगेन्द्र ने लिखा है– "शोध अर्थात शुद्ध करना, इसके अनतर्गत आता है– प्राप्त सामग्री का संस्कार, परिष्कार। जिस प्रकार कोई धातु शोधक उपलब्ध खनिज पदार्थों को स्वच्छ और शुद्ध करके हमारे सम्मुख रखता है उसी प्रकार साहित्यिक– शेध कर्त्ता भी अपनी उपलब्ध सामग्री को शुद्ध करके परिष्कृत रूप में हमारे समक्ष उपस्थित करता है।

वैश्वीकरण के वर्तमान दौरे में उच्च शिक्षा की सहज उपलब्धता और उच्च शिक्षा संस्थानों को शोध से अनिवार्य रूप से जोडने की नीति ने शोध के महत्व को बढा दिया है। आज शैक्षिक शोध का क्षेत्र विस्तृत और सघन हुआ है। व्यक्ति का शिक्षा से दो रूपों में सम्बन्ध बनता है। एक तो वह शिक्षा से अपने ज्ञान को विस्तृत करता है। और दूसरे वह अपने अध्ययन से दीक्षित होकर शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करते हुए शिक्षा में या अपने शैक्षिक विषय में कुछ नया जोड़ता है। इस प्रकार प्रथम सोपान है– शिक्षा से ज्ञान प्राप्त करना और दूसरा प्राप्त ज्ञान में कुछ नया जोड़ना, शोध का सम्बन्ध इस दूसरे सोपान से ही है। एम० फिल०,पीएच० डी० या डी० लिट० जैसी उपाधियाँ इसी अपेक्षा से जुड़ी हैं कि इनमें अध्येता अपने शोध से ज्ञान के कुछ नये आयाम उद्घाटित कर सके।

शोध मानव ज्ञान को दिशा प्रदान करता है, ज्ञान भण्डार को विकसित एवं परिमार्जित करता है, व्यक्ति का बौद्धिक विकास करता है, सामाजिक विकास मे सहायक है, व्यक्ति की जिज्ञासा मूलक वृत्ति को शांत करता है, ज्ञान के विविध पक्षो को सूक्ष्मता एवं गहनता प्रदान करता है, सांस्कृतिक विकास मे सहायक है, पूर्वाग्रहो के निदान और निवारण मे सहायक होता है।

शोध विधि

किसी भी शोध को वैज्ञानिकता प्रदान करने के लिऐ विभिन्न अध्ययन प्रणालियों तथा विधियों का प्रयोग करना अनिवार्य होता है। शोध विषय से सम्बन्धित वस्तु परक तथा तथ्यपरक वैज्ञानिक निष्कर्ष प्राप्त करने के लिये शोधकर्ता को निरीक्षण तथ्य संचालन, वर्गीकरण, प्रशिक्षण, पुनर्परीक्षण निष्कर्ष एवं प्रस्तुतीकरण आदि के जटिल रास्तो से गुजरना पड़ता है। किसी भी शोध का मूलअधार वस्तुनिष्ठ एवं विश्वसनीय सूचनायें ही होती हैं जिन्हे संकलित करने के लिये शोधकर्त्ता को अनेक पद्धतियो, उपकरणों एवं विधियों को प्रयोग मे लाना पड़ता है। सामान्यता शोध के द्वारा तीन प्रश्नों का उत्तर ज्ञात करते है। अर्थत– शोध कार्य जिस तथ्य से सम्बन्धित होता है उसके सम्बन्ध मे तीन प्रकार के प्रश्न किये जा सकते हैं– क्या क्यों और कैसे ? इनमें से यदि 'क्या' का उत्तर प्राप्त करना है तो ऐतिहासिक अथवा वर्णनात्मक तथा सर्वेक्षण शोध– विधियों का प्रयोग किया जाता है। यदि 'क्यों' का उत्तर शोध द्वारा ज्ञात करना है तो दार्शनिक विधि का और यदि 'कैसे' प्रश्न का उत्तर ज्ञात करना है तो प्रयोगात्मक शोध विधि का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार शोध कार्य मे मुख्य रूप से तीन विधियों का प्रयोग किया जाता है–

1. ऐतिहासिक अथवा वर्णनात्मक शोधविधि
2. सर्वेक्षण शोध विधि
3. प्रयोगात्मक शोध विधि

ऐतिहासिक अथवा वर्णनात्मक विधि का सम्बध अतीत से होता है। इसमे अतीत के आधार पर वर्तमान का विश्लेषण कर भविष्य को समझने का प्रयास किया जाता है। सर्वेक्षण विधि के अन्तर्गत तथ्य की वर्तमान स्थिति का अध्ययन प्रश्नोत्तरी तथा साक्षात्कार के माध्यम से किया जाता है जिसमें वर्तमान में उस तथ्य के स्वरूप को ज्ञात किया जाता है। प्रयोगात्मक विधि से कारण एवं सम्बध का अध्ययन किया जाता है। इसके अधार पर भविष्यवाणी भी की जाती है। यह विधि विशेष रूप से तथ्य के भविष्य से सम्बधित होती है।

उपरोक्त के अतिरिक्त शेध कार्य मे आलोचनात्मक, सम्स्यामूल्क तुलनात्मक काव्यशास्त्रीय, मनोवज्ञानिक, वर्गीय–अध्ययन, क्षेत्रीय–अध्ययन, आगमन, और निगमन आदि विधियो का भी प्रयोग किया जाता है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

साहित्यिक अनुसंधान के आयाम

सुजाता चतुर्वेदी
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
क्राइस्ट चर्च कॉलेज
कानपुर

सारांश

अनुसंधान द्वारा ज्ञान–क्षेत्र को अधिक विस्तार देने वाले किसी नए तथ्य या सत्य का उद्घाटन करने का प्रयास किया जाता है। इस कार्य में सोद्देश्य निरीक्षण के साथ संयत कल्पना, परीक्षण और व्याख्या की आवश्यकता है। साहित्यिक अनुसंधान में साहित्यिक तथ्यों पर चिंतन व गंभीर मनन किया जाता है। चूँकि साहित्य का माध्यम भाषा है, अतः साहित्यिक अनुसंधान में भाषा की अभिव्यंजना पद्धति का तथा तदनुसार व्यवहृत शैलियों का भी अध्ययन किया जाता है। साहित्य से संबद्ध शोध–कार्य मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा और प्रसार में यथेष्ट योगदान देते हैं। इस शोध प्रक्रिया द्वारा संस्कृति–बोध उन्नत और विकसित होता है। इसी अनुसंधान की प्रक्रिया में साहित्य में अंतर्निहित अनुशासन की पहचान करके शोधार्थी सत्यान्वेषण अधिक सहज रूप में कर सकता है। सांस्कृतिक मूल्यों की पहचान के साथ–साथ ऐतिहासिक दृष्टि विकसित करके साहित्यिक तथ्यों की परख करना आवश्यक है।

साहित्यिक शोध के प्रमुख आधार स्तंभ हैं– शोध विषय का निर्धारण, प्रबन्ध का रूपरेखांकन, सामग्री संकलन, विषय निर्वाचन और निष्कर्ष। साहित्यिक शोध केवल तथ्यों या आंकड़ों की खोज तक सीमित नहीं रहता है, बल्कि उसमें उन तथ्यों की नवीन व्याख्या या उनका प्रत्याख्यान होता है। जड़ तथ्यों को जागृत जीवन्त व्यक्तित्व व आलोक देना साहित्यिक अनुसंधान का विशेष कार्य है। विषय विवेचन करते समय शोध–कार्य में शोधार्थी के व्यक्तित्व का जीवन्त और मौलिक संस्पर्श हो तथा साथ ही वैज्ञानिक तटस्थता का निर्वाह भी हो।

यह भी ध्यातव्य है कि शोध प्रबन्ध की रूपरेखा सुडौल, सुनियोजित व सुसंबद्ध होनी चाहिए। सामग्री संकलन में शोधार्थी को आवश्यकता, प्रामाणिकता और विश्वसनीयता को ध्यान में रखते हुए कार्य करना चाहिए। उत्तम विषय विवेचन तक पहुँचने के लिए विषय की मूल प्रकृति के अनुसार रूपरेखा का निर्माण किया जाना चाहिए। सर्वांगपूर्ण रूपरेखा के साथ समस्त कृति में क्रमागत नियोजन, कलात्मक सौष्ठव, तर्क और प्रमाण की विश्वस्तता और शुद्ध निष्कर्षों की प्रखरता का होना भी आवश्यक है।

वस्तुतः साहित्यिक अनुसंधान की अपनी जटिलताएँ व कठिनाइयाँ भी हैं किन्तु यह भी सत्य है कि साहित्य संबद्ध शोध कार्य मानव चेतना को उन्नत, समाज को विकसित और व्यक्ति को संयमी बनाता है। व्यक्ति–तत्व के प्राधान्य के कारण इसमें कलात्मकता व सौष्ठव का उत्कर्ष प्रकट हो सकता है, तो दूसरी ओर बौद्धिक तटस्थता, गांभीर्य व संयम–संतुलन की भी अपेक्षा रहती है।

प्रस्तावना

अनुसंधान अथवा शोध उस प्रक्रिया का नाम है जिसमें बोधपूर्वक प्रयत्न से तथ्यों का संकलन कर विवेचक बुद्धि से उनका विश्लेषण करके नए तथ्यों या सिद्धान्तों का उद्घाटन किया जाता है। विविध क्षेत्रों में होने वाले अनुसंधानों की पद्धतियाँ भले ही भिन्न हों, किन्तु सबका अनिवार्य लक्ष्य एक ही होता है कि ज्ञान–क्षेत्र को अधिक विस्तार देने वाले किसी नए तथ्य या सत्य का उद्घाटन हो। अंग्रेज़ी शब्द 'रिसर्च' में समाहित खोज, पूछताछ, छानबीन, परीक्षण और निर्णय के साथ व्याख्या और गूढ़ चिंतन को भी 'अनुसंधान' शब्द अभिव्यक्त करता है। अनुसंधान के भीतर नवीन तथ्यों, विचारों, निष्कर्षों, दृष्टियों, परम्पराओं आदि का उद्घाटन आवश्यक है। किन्तु इसमें एक दृष्टि और एकसूत्रता होनी अनिवार्य है, अन्यथा यह विविध पक्षों का अध्ययन–अध्यापन मात्र रह जाएगा।

अनुसंधान कार्य में सोद्देश्य निरीक्षण के साथ संयत कल्पना, परीक्षण और व्याख्या की आवश्यकता है। इस कार्य में एक विशेष ईमानदारी और गांभीर्य अपेक्षित रहता है। किसी भी अनुसंधान की कुछ प्रमुख अवस्थाएँ या स्थितियाँ होती हैं। प्रथम अवस्था वह है जब किसी अज्ञात वस्तु या तथ्य का उद्घाटन किया जाए। द्वितीय अवस्था में इस प्रकार ज्ञात वस्तु या तथ्य की नवीन व्याख्या होती है। कभी–कभी यह नवीन व्याख्या हमारी परम्परागत धारणाओं को बदल देती है। तृतीय अवस्था सामंजस्य की होती है। इसमें युग की मान्यताओं या नूतन आदर्शों के प्रकाश में पूर्ववर्ती या आधुनिक प्रवृत्तियों का सामंजस्य करने का प्रयास किया जाता है। साथ ही इन प्रवृत्तियों के मूलवर्ती कारणों का ऐतिहासिक या मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है। अन्तिम अवस्था वह है जब इस प्रकार खोजा हुआ तथ्य प्रामाणिक सत्य के रूप में स्वीकृत हो जाता है और उसी की मान्यता पर सत्यान्वेषण की दिशा में और प्रगति की जाती है। इस प्रकार अनुसंधान की विभिन्न अवस्थाओं में सत्य का आंशिक उद्घाटन प्रारंभिक रूप में होता है, जो अंत तक पूर्णतया प्रकाशित हो जाता है और आगे के अनुसंधान के लिए पृष्ठभूमि का काम करता है। वस्तुतः अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य पूर्ण, अनंत एवं शृंखलाबद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना है।

अनुसंधान में एक ओर जहाँ तथ्यों को संकलित किया जाता है, वहाँ दूसरी ओर उन पर चिंतन भी किया जाता है। इस तरह किसी विषय के तथ्य और उस तथ्य पर चिंतन द्वारा ज्ञान के क्षितिजों का विस्तार किया जाता है। साहित्यिक अनुसंधान के अन्तर्गत साहित्यिक तथ्यों पर चिंतन व गम्भीर मनन किया जाता है। यह सत्य है कि 'साहित्यिक तथ्य' जीवन में अनुभूत स्थितियों, मूल्यों और विचारों के संवेदनों को उजागर करने वाले तथ्य हैं। चूँकि साहित्य का माध्यम भाषा है, अतः साहित्यिक अनुसंधान में भाषा का, अभिव्यंजना पद्धति का तथा तदनुसार व्यवहृत शैलियों का भी अध्ययन किया जाता है। इन साहित्यिक तथ्यों का संदर्भ जानने और समझने में समवर्गी विधा–शाखाएँ सहायता करती हैं। इसीलिए 'साहित्यिक तथ्यों' की उचित मीमांसा और अर्थ–विवृत्ति के लिए ज्ञान की अन्य शाखाओं से परिचित होना आवश्यक है।

समवर्गी विधा–शाखाओं का सीधा संबंध साहित्य के मूल्यांकन से संबंधित प्रतिमानों से है। 'साहित्यिक अनुसंधान' में समीक्षा की विकसित प्रणालियाँ साहित्य की समझ को बढ़ाने में समर्थ हो सकती हैं। समीक्षा की ये विकसित प्रणालियाँ, समवर्गी विधा–शाखाओं की उपलब्धियों से प्रभावित रहती हैं। इसीलिए इन सबका अध्ययन आवश्यक है।

साहित्य में जिन मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा विद्यमान रहती है, उसकी पहचान बढ़ाना 'साहित्यिक अनुसंधान' का कार्य है। प्रत्येक रचना अपने–आप में विशिष्ट होती है और उसमें अभिव्यक्त मानवीय मूल्य, मानव मात्र को मानव होने के नाते, मानव के सामान्य गुण–धर्मों के रूप में आकर्षित कर सकते हैं। साहित्य की यह चरम उपलब्धि है और इस उपलब्धि को अपने में जीवित रखना 'साहित्यिक अनुसंधान' का कार्य है। अतः 'साहित्यिक अनुसंधान' का एक बड़ा लाभ यह होता है कि इस शोध प्रक्रिया में संस्कृति–बोध उन्नत और विकसित होता है।

साहित्य–सृजन का अपना एक अनुशासन होता है। इस अनुशासन को पहचानना 'साहित्यिक अनुसंधान' का कार्य होता है। भाषा के बाद भाषा का व्याकरण बनता है। किसी भाषा में जो आंतरिक अनुशासन पाया जाता है, उसका बोध उस भाषा के व्याकरण से हो जाता है। इसी तरह साहित्य–सृजन के बाद साहित्य का अध्ययन तथा साहित्य का चिंतन करने वाले साहित्य–सृजन के आंतरिक अनुशासन को पहचानने का प्रयत्न करते हैं। साहित्यशास्त्र साहित्य के अनुशासन का शास्त्र है। इस अनुशासन को मौलिक रूप से पहचानने के लिए ही 'साहित्यिक अनुसंधान' की आवश्यकता है।

'साहित्यिक अनुसंधान' के साथ ऐतिहासिक दृष्टि का सम्मिलन भी अत्यावश्यक है। इतिहास घटित को घटना–प्रक्रिया के अन्वेषण के माध्यम से पहचानने–प्रमाणित करने की अध्ययन विधि है। शोध का मूल लक्षण भी रचना के तंत्र का विधिवत उद्घाटन है। किसी साहित्यिक विषय पर शोध करते समय भी उसके तंत्र पर विचार करने के क्रम में ऐतिहासिक दृष्टि अपनाए बिना कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ–उपन्यासकार प्रेमचन्द पर शोध कार्य में उनके उपन्यासों का तंत्र उद्घाटित किया जाता है। रचयिता की दृष्टि की रचना–रूप में परिणति की प्रक्रिया के अध्ययन पर ही बात समाप्त नहीं हो जाती है। यहाँ से खोजा जाता है कि रचयिता को दृष्टि व अभिव्यक्ति–योजना की प्रेरणा क्यों और कहाँ से मिली। इन प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए रचयिता के मनोविज्ञान तथा युगीन प्रभाव (इतिहास) का सघन निरीक्षण–परीक्षण किया जाता है। इस प्रकार 'साहित्यिक अनुसंधान' में ऐतिहासिक दृष्टि से परख अत्यन्त आवश्यक है।

अतः साहित्यिक अनुसंधान एक ओर साहित्य में निहित मानवीय मूल्यों की पहचान बढ़ाकर सांस्कृतिक बोध को विकसित करता है, वहीं दूसरी ओर साहित्य–सृजन में अंतर्निहित तंत्र और पद्धतियों की पहचान कर उनका व्यावहारिक एवं वस्तुमूलक विवेचन प्रस्तुत करता है। इसके साथ ही ऐतिहासिक दृष्टि, सामाजिक बोध, सांस्कृतिक विकास भी साहित्यिक अनुसंधान को उचित गति प्रदान करते हैं।

साहित्यिक शोध के कुछ प्रमुख आधार स्तंभ माने गए हैं, यथा–शोध विषय का निर्धारण; प्रबन्ध का रूपरेखांकन, सामग्री संकलन, विषय निर्वाचन और निष्कर्ष। इन सभी में विषय–विवेचन का महत्व सर्वोपरि है, क्योंकि यही वह विशद भूमि है, जहाँ रूपरेखा को मूर्त आधार प्राप्त होता है, शोधार्थी की मौलिक व प्रखर बौद्धिक शक्तियों व मानसिक क्षमताओं का सुस्पष्ट व प्रभावकारी प्रकाशन होता है और जहाँ शोध के निष्कर्ष की दिशाएँ निर्णीत होती हैं।

साहित्यिक शोध केवल तथ्यों की खोज तक सीमित नहीं रहता है, बल्कि उसमें तथ्यों या सिद्धान्तों की नवीन व्याख्या या उनका प्रत्याख्यान होता है। इसमें विषय–विवेचन के लिए खुलकर स्थान होता है। इस प्रक्रिया में खंडन–मंडन करना, विशेष परीक्षण करना, मत–संशोधन करना, स्थापित सिद्धान्तों में संगति लाना आदि कार्य विवेचन के कलेवर को गढ़ते हैं। इस प्रकार साहित्यिक शोध की मूल प्रकृति देखने पर यह बात, निर्विवाद रूप से सामने आती है कि कोरे तथ्यों व आंकड़ों का स्थान मात्र तथ्य–संग्रहात्मक जैसे अनुसंधानों के लिए उपयुक्त होता है, साहित्यिक अनुसंधान के व्यापक प्रवाह में इसका महत्व बहुत नगण्य है। जड़ तथ्यों को जागृत जीवंत व्यक्तित्व व आलोक देना साहित्य या साहित्यिक शोध का विशेष कार्य है।

साहित्यिक अनुसंधान में विषय–विवेचन के कार्य में उतरते समय दो बातें अवश्य विवेचन के अंग के रूप में होनी चाहिए– एक, शोधार्थी के व्यक्तित्व का जीवन्त और मौलिक संस्पर्श तथा दूसरे वैज्ञानिक तटस्थता का निर्वाह। मौलिक अनुसंधान में तथ्यों को विवेचनोपयोगी बनाने हेतु निर्जीव जड़ तथ्यों को स्पंदित व चैतन्यपूर्ण बनाने के लिए शोधार्थी का वैयक्तिक संस्पर्श होना आवश्यक होता है। शोधक की वैयक्तिक रुचि, विचार, संस्कार, जीवन व जगत के प्रति दृष्टिकोण, जीवन मूल्य आदि उन जड़ तथ्यों में चेतना का संचार करते हैं। इसी कारण अनुसंधान या शोध मौलिक सर्जना से कम नहीं है। इस प्रकार विषय–विवेचन में शोधक की बुद्धि की सारी स्वच्छता, समृद्धि व गुणवत्ता उसके मूल व्यक्तित्व और वैज्ञानिक दृष्टि व पद्धति के सुन्दर योग के कारण सफलतापूर्वक उत्पन्न होती है।

शोध–विषय के विवेचन का प्रबंध की रूपरेखा से घनिष्ठतम संबंध होता है। उत्तम कोटि का विवेचन उसी प्रबन्ध में संभव है जो सुडौल, सुनियोजित या सुसंबद्ध रूपरेखा के आधार पर खड़ा होता है। रूपरेखा वस्तुतः प्रबन्ध का एक वातायन होता है, जिसमें से झाँकते ही प्रबन्ध की असीम संभावनाओं के क्षितिज आलोकित हो उठते हैं। साथ ही शोधार्थी की निजी प्रकृति, विचार, प्रबन्ध कौशल आदि प्रवृत्तियाँ इस प्रबन्ध रूपरेखा से सहज स्पष्ट हो उठती हैं।

अपनी अनुसंधान–यात्रा में, शोधार्थी सामग्री–संकलन की प्रक्रिया में सभी संभव स्रोतों से ग्राह्य–अग्राह्य, सामान्य–मूल्यवान– सब प्रकार की सामग्री विवेकपूर्ण ढंग से एकत्रित करता चलता है। शोध के लिए समस्त कच्ची सामग्री के संकलित हो जाने पर प्रबन्ध की सहज आकांक्षा या आवश्यकता के अनुरूप सामग्री की महत्वक्रम से, परिमाण की दृष्टि से और विश्वसनीयता की दृष्टि से छंटाई की जाती है। इसी सामग्री को फिर प्रामाणिक विवेचन का आधार बनाया जाता है।

उत्तम विषय–विवेचन के आकांक्षी शोधार्थी को रूपरेखा के निर्माण में सबसे अधिक श्रम करना चाहिए। विषय की मूल प्रकृति के अनुरूप, विषय के विवेच्य अंगों के महत्व के अनुरूप एक सृष्टा कलाकार की प्रतिभापूर्ण अंतर्दृष्टि से सर्वांगपूर्ण रूपरेखा तैयार करना श्रेष्ठ शोधक से अपेक्षित है। यह आवश्यक है कि प्रबंध को खंडों, प्रकरणों, अध्यायों, उप–अध्यायों में बाँटकर शोधक अपने विषय पर अधिकार को प्रमाणित करे। प्रबन्ध की समूची रूपरेखा के सारे विस्तार का जुड़ाव मूल विषय से उसी प्रकार होना चाहिए जैसे एक वृहद वृक्ष का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुड़ाव उसके बीज से होता है। यह सुदृढ़, संबंध–सूत्र विवेच्य विषय को गहनता, गंभीरता, संपूर्णता और सुदृढ़ता प्रदान करने में सक्षम होता है।

साहित्यिक शोध में विवेचन–क्रम के लिए प्रत्येक प्रकरण की अपनी एक निजी योजना होती है। उसमें शीर्षकों–उपशीर्षकों का स्थापन एक वैज्ञानिक क्रम से होना चाहिए। शोधार्थी को यह ध्यान रखना चाहिए कि सभी स्तंभों को क्रमागत व उचित विवेचन–विस्तार हेतु स्थान मिले और सभी प्रकरणों का एक–दूसरे से क्रमपूर्वक जुड़ाव बना रहे। इस क्रमागत नियोजन से संपूर्ण प्रबंध को अपनी समग्रता में, अनुपात व अन्विति–स्थापना की दृष्टि से एक श्रेष्ठ अनुसंधान–कृति का स्थान प्राप्त हो सके। यही प्रबंध का कलात्मक विन्यास कहलाता है और इस सुषमा–सौष्ठव पर ही विषय–विवेचन की समग्र प्रभविष्णुता बहुत कुछ निर्भर करती है। साहित्यिक प्रकृति के शोध प्रबंध में कलात्मक सौष्ठव का अभाव निश्चय ही कृति के महत्व को क्षति पहुँचाता है।

शोध–विषय के विवेचन का आधार है– तर्क और प्रमाण, कथन में कार्य–कारण की अटूट शृंखला का निर्वाह और प्रमाणों के द्वारा अपने कथन की निर्भ्रान्त पुष्टि। शोध–कार्य की आवश्यकता और विषय की प्रकृत माँग के अनुसार शोधक प्रमाणों की व्यवस्था कर सकता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि शोध, एक प्रमाण–पुष्ट, आलेख होता है और प्रमाणों की व्यवस्था ईमानदार शोधार्थी का गहनतम सरोकार होता है।

विषय–विवेचन की सार्थकता शोध के अंत में निष्कर्षों की प्रखरता और शुद्धता से प्रकट होती है। शोधक की सजगता व मौलिकता का निदर्शन प्रबंध के निष्कर्षों द्वारा होता है। विषय–विवेचन में से निष्कर्ष आरोपित रूप में नहीं, वरन् सहज रूप से उद्‌भूत होने चाहिए। विवेचनगत तथ्यों और विचारक्रम से उन निष्कर्षों की पूर्ण संबद्धता दृष्टिगत होनी चाहिए। पूर्व प्राप्त तथ्यों व परिणामों के गहन अध्ययन व शोध के संयोग से एक नवीन सत्य तक पहुँचकर शोधार्थी अपने अध्ययन की प्रगाढ़ता, व्यक्तित्व की मौलिकता और सहज सघन जीवन दृष्टि का परिचय देता है।

वस्तुतः साहित्यिक शोध–लेखन का अपना एक विशिष्ट स्वरूप व अनुशासन होता है। शोध–लेखन गरिमापूर्ण, संयत और मौलिकतापूर्ण होना चाहिए। इसी कारण अनुसंधान को एक साधना माना गया है। सच्चा मानसिक यज्ञ शोध के अंतिम चरण में– शुद्ध बुद्धि से शुभ्र निष्कर्षों के धवल आलोक में सम्पन्न होता है। निर्जीव बिखरे पड़े तथ्यों में अपनी मेधा की सक्रियता द्वारा कलाकार की–सी निर्माण–दृष्टि के सम्मिलन से चैतन्यपूर्ण प्राण संचार करके उन्हें सार्थक बनाने में ही लेखकीय व्यक्तित्व के शोधक पक्ष का उत्कर्ष प्रकट होता है। इस प्रकार एक ओर तो शोधार्थी को व्यक्तित्व के सूक्ष्म गुणों के प्रकाशन की छूट रहती है, तो दूसरी ओर संयम–संतुलन के तत्वों से सम्पन्न शोधक की बौद्धिक तटस्थता व कठोर आत्म निग्रह रहता है– इसी संयम–साधना में शोधक का वास्तविक अनुसंधित्सु व्यक्तित्व प्रकट होता है।

अंत में संक्षेप में साहित्यिक अनुसंधान की जटिलताओं और कठिनाइयाँ पर थोड़ा प्रकाश डाला जा सकता है। शोधार्थी अत्यंत अथक परिश्रम के बाद प्रमाणों उद्धरणों के आधार पर शोध–कार्य को स्वरूप देता है। उसके सारे प्रमाण किसी प्रमेय का समर्थन करते हैं। अंतरंग ओर बहिर्साक्ष्य भी उसी तथ्य का प्रतिपादन करते हैं। तब तक एक छोटी–सी घटना, कोई नन्हा–सा प्रमाण ऐसा सामने आ जाता है, जिसकी संगति इस संगठन में ठीक से नहीं बैठती। अतः शोधकर्ता को अपने सारे व्यापार पर पुनरावलोकन करना पड़ता है, संगति की युक्तियुक्त खोज करनी पड़ती है अथवा अपने मत में परिवर्तन करना पड़ता है। वास्तविक अनुसंधानकर्त्ता को पूर्णतः संशयवादी बनना पड़ता है। तथ्यों को तर्क और बुद्धि की कसौटी पर पूरी तरह परख कर ही आगे बढ़ सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ जटिलताएँ जो साहित्यिक अनुसंधान में कठिनाई उत्पन्न करती हैं, वे हैं– मौलिक अभिलेखों की नकल करने में भूल; साक्षी की नैतिक, राजनैतिक तथा वैयक्तिक अभिरुचि; बहुत लंबी अवधि के पश्चात् घटनाओं को यथातथ्य रूप में स्मृति पटल पर ला सकने की अक्षमता, छपाई की भूल, समान नामधारी व्यक्तियों को एक ही समझ लेना इत्यादि।

साहित्य मानव चेतना के अत्यन्त परिष्कृत क्षणों की वाणी है। उसमें व्यक्ति–तत्व और कलात्मकता का प्राधान्य है। अतः अनुसंधान करते समय 'साहित्यिक अनुसंधान' को केवल समाजविज्ञान से संबद्ध विधियों से नहीं आंका जा सकता। कई बार वैज्ञानिक विधियों का संबंध साहित्य के भौतिक आधार से तो मिल जाएगा, परन्तु अंतरंग रूप से साहित्य चेतना को वैज्ञानिक प्रविधियों में नहीं बाँधा जा सकता है। साहित्य की अपनी प्रवृत्ति के अनुसार ही उसके शोध की प्रविधि–प्रक्रिया होनी

चाहिए। साहित्य की अंतर्मुखी और व्यक्ति–तत्व प्राधान्य की प्रवृत्तियों का ध्यान रखते हुए अनुसंधान की प्रविधियों और प्रक्रियाओं का प्रयोग विवेकपूर्ण रूप से किया जाना श्रेयस्कर होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *'साहित्यिक अनुसंधान', राजेन्द्र मिश्र, हिन्दी बुक सेंटर।*
2. *'साहित्य विचार', आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, वाणी प्रकाशन।*
3. *'लेखक की साहित्यिकी', नंदकिशोर आचार्य, वाणी प्रकाशन।*
4. *'अनुसंधान : स्वरूप और आयाम', डॉ0 उमाकांत गुप्त, वाणी प्रकाशन।*
5. *'अनुसंधान प्रविधि : सिद्धान्त और प्रक्रिया', एम0एन0 गणेशन, लोकभारती प्रकाशन।*
6. *'हिन्दी अनुसंधान', विजयपाल सिंह, लोकभारती प्रकाशन।*
7. *'साहित्यिक अनुसंधान के प्रतिमान', देवराज उपाध्याय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस।*

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के गुणात्मक शोधपत्र में साहित्यावलोकन, ग्रन्थ सूची बनाम सन्दर्भ सूची

दीपा तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर
शिक्षा संकाय
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

मानव ऐसा प्राणी है जो ज्ञान प्राप्त करना चाहता है और ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात उससे लाभ उठाता है। ज्ञान के भण्डार में मनुष्य द्वारा किये गये योगदान से मनुष्य के प्रयास सफल होते है।

सम्बन्धित साहित्य से तात्पर्य अनुसंधान की समस्या से सम्बन्धित उन अभिलेखो से है जिनके अध्ययन से अनुसंधान कर्ता को अपनी अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने व कार्य को आगे बढाने में सहायता मिलती है साथ ही ये ज्ञान हो जाता है की प्रस्तुत विषय पर कब, कहॉ, और कितना कार्य हुआ एवं किन उपकरणों का कितना प्रयोग हुआ एवं प्राप्त निष्कर्ष कितने उपयोगी होंगे।

इस प्रकार सम्बन्धित साहित्य के बिना शोधकर्ता अपने अध्ययन को उचित दिशा नही प्रदान कर सकता है क्योकि उसे ये ज्ञान नहीं होता कि उस क्षेत्र में कितना कार्य हुआ है किस विधि का प्रयोग किया गया है।

सम्बन्धित साहित्य का उदेश्य अनुसंधान हेतु सिद्धान्त विचार ,व्याख्या, तथा परिकल्पनों, प्रदान करना है। जो समस्या चयन हेतु आवश्यक होते है।

संबंधित साहित्य की आवश्यकता केवल शोध में अध्याय जोड़ने हेतु ही नहीं है वरन यह अनुसन्धान के सभी स्तरो पर सहायक है। यह अनुसन्धान के सभी पक्ष हेतु जैसे समस्या का चुनाव परिभाषीकरण, कथन, अध्ययन,की रूपरेखा आदि में सहायक है।

ग्रन्थ सूची सन्दर्भ ग्रन्थ सूची के अर्न्तगत अनुसंधान कर्ता उन ग्रन्थो की सूची बनाकर लिखता है। जिन ग्रन्थो से उसे अपने अनुसंधान हेतु सहायता मिली है इनको वह क्रमानुसार नाम, सन, उनके शोधपत्र का नाम, वॉल्युम संख्या और पृष्ठ संख्या आदि वर्णमाला क्रम के अनुसार लिखता है।

इस प्रकार साहित्यावलोकन से अध्ययनकर्ता को ये ज्ञान हो जाता है कि वह अपने क्षेत्र में कहाँ तक नई खोजे कर सकता है। वह उन विधियों और पुस्तकों को जान लेता है जो उसके शोध हेतु उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

हिन्दी शोध कार्य

आशा वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
डी0बी0एस0 कालेज
कानपुर

सारांश

विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयों में इस समय हिन्दी–भाषा और हिन्दी साहित्य पर तीव्र गति से शोध कार्य हो रहे हैं। हिन्दी में ही नहीं देश की अन्य भाषाओं, तत्सम्बन्धी साहित्य तथा साहित्येतर विषयों में भी शोधकार्य हो रहे हैं। शोध की समस्याएँ हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी–भाषा के साथ ही नहीं हैं अन्य साहित्येतर विषयों के साथ भी जुड़ी हुई हैं। ये समस्याएँ अन्य विषयों की समस्याओं से हिन्दी के साथ अधिक गम्भीर हैं। कारण स्पष्ट हैं : हिन्दी जनसामान्य की भाषा है। हिन्दी का पठन–पाठन भारत में ही नहीं विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में भी होता है। अतः हिन्दी शोध का मूल्यांकन विश्वस्तर पर होता है। हिन्दी शोध–जगत् में आदर्श तथा मानक शोध–नियमों की अपरिहार्य आवश्यकता है ताकि शोध–प्रबन्धों की विश्लेषणपद्धति तथा विवेचनशैली में स्पष्टता, संक्षिप्तता, प्रामाणिकता, निश्चितता तथा पूर्णता स्थापित हो सके। वर्तमान हिन्दी शोध–क्षेत्र को व्यवसायी प्रवृत्ति से बचाने की आवश्यकता है। पदप्राप्ति, धनप्राप्ति की भावना से किए जाने वाले शोधकार्यों पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। शोधकार्य पवित्र ज्ञानप्राप्ति तथा ज्ञानविस्तार की भावना से किए जाने चाहिए। हिन्दी शोध–पर्यवेक्षकों तथा शोध–परीक्षकों को ईमानदारी, निष्ठा, अनवरत साधना तथा प्रगाढ़ अध्ययन और प्रशिक्षण के द्वारा हिन्दी–शोधकार्य को प्रभावी तथा उच्च स्तरीय बनाना है। हिन्दी शोधकार्य केवल मानक बनकर हिन्दी शोध–जगत् का गौरव न बढ़ाए अपितु विश्व शोधमूल्यों को भी प्रोत्साहित तथा प्रेरित करे।

मुख्य शब्द – वर्णाश्रम, गृहस्थ, वानप्रस्त, ज्ञानार्जन, शिक्षार्जन, निराकरण, प्रासंगिक, निष्णात, सानुपातिक, प्रशिक्षण, अनुदान आत्मश्लाघा, मनोवृत्ति, संस्तुति, मूल्यांकन।

हिन्दू समाज में वर्णाश्रम व्यवस्था की अवधारणा का नियमन व्यक्ति की योग्यता, क्षमता और सामर्थ्य को इस सीमा तक विकसित करने के प्रयोजन से किया गया था कि वह समाज और राष्ट्र के लिए अधिकाधिक उपयोगी और सार्थक सिद्ध हो सके। आश्रम व्यवस्था के अनुसार, हर व्यक्ति के व्यक्तित्व–विकास के चार सोपान हैं – ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। व्यक्ति जीवन की आयु सौ वर्ष मानकर ब्रह्मचर्य को पच्चीस वर्ष तक निर्धारित किया गया था। मानव जीवन के चार पुरुषार्थों– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को पाने के लिए आवश्यक है कि नींव अर्थात् ब्रह्मचर्याश्रम को सुदृढ़ बनाया जाये। तन, मन और आत्मा को निष्कलंक, स्वस्थ, निर्मल और पवित्र बनाये रखने के लिए भी ब्रह्मचर्याश्रम का महत्वपूर्ण स्थान है। ब्रह्मचर्याश्रम में व्यक्ति न केवल तन–मन को सबल बनाता है, अपितु ज्ञानार्जन भी करता है। भगवान् कृष्ण ने ज्ञान को सर्वाधिक पवित्र मानते हुए कहा है –

नहिं ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते – श्रीमद्भगवद्गीता, 4/48

ज्ञान प्राप्त करने की सबसे पहली पाठशाला घर–परिवार है और माता–पिता सर्वोत्तम शिक्षक कहे गये हैं। बालक संस्कारों की शिक्षा माता–पिता से ही प्राप्त करता है, पर औपचारिक और वास्तविक शिक्षा के लिए बालक को गुरु और गुरुकुल की शरण में जाने की परम्परा वैदिककाल से चली आ रही है। प्राचीनकाल में बालक को उपनयन संस्कार के पश्चात् कुलगुरु के संरक्षण में भेज दिया जाता था। बालक प्रायः पच्चीस वर्ष की अवस्था तक गुरुकुल में रहकर विविध विषयों की शिक्षा प्राप्त करता था। प्राचीनकाल में भारत वर्ष में हजारों गुरुकुल थे, जिनमें तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, वल्लभी आदि कुछ विश्वभर में लोकप्रिय थे। इनमें विदेशों से भी हजारों विद्यार्थी आकर शिक्षा प्राप्त करते थे। उस समय शिक्षार्जन एक प्रकार की तपस्या थी, साधना थी। तब छात्र सुख की लालसा का परित्याग कर गुरुकुल में रहकर, नाना प्रकार के कष्ट सहकर शिक्षार्जन करता था। वेदव्यास जी ने ठीक कहा है –

सुखार्थिनः कुतो विद्या, विद्यार्थिनः कुतो सुखम्।
सुखार्थी वा त्यजेत् विद्यां, विद्यार्थी त्यजेत सुखम्।।–महाभारत, उद्योग पर्व, 4/6

आधुनिक शिक्षा प्रणाली पूर्णतः बदल चुकी है। अंग्रेजी शासन काल में प्रचलित की गयी आधुनिक शिक्षा प्रणाली में शिक्षा के चार सोपान हैं – प्राथमिक शिक्षा, जूनियर हाईस्कूल, उच्चतर माध्यमिक और विश्वविद्यालयी शिक्षा।

हमारा मंतव्य विश्वविद्यालयी शिक्षा से है, जो स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा प्रदान करने के साथ ही शोधकार्य का दायित्व भी सँभाले हुए है। हमारे देश में विश्वविद्यालय भी कई प्रकार के हैं, जैसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय, डीम्ड विश्वविद्यालय, प्रान्तीय सरकारों द्वारा मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय आदि। सभी प्रकार के विश्वविद्यालयों का नियंत्रण विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अधीन है।

उच्चतर शिक्षा और शोधकार्य के लिए विगत् वर्षों तक विदेशी विश्वविद्यालयों का आकर्षण था, पर अब भारतीय विश्वविद्यालयों में भी उच्च स्तर का शोध कार्य कराया जा रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू0जी0सी0) ने अध्यापकों की नियुक्ति, प्रोन्नति के लिए शोध कार्य को अनिवार्यतः अपेक्षित बतलाया है। एक सामान्य धारणा है कि विश्वविद्यालयों में

किया जाने वाला शोधकार्य स्तरीय नहीं होता। इधर–उधर से चुराई गयी, काट–छाँट कर पुरानी सामग्री को नये रूप में प्रस्तुत कर अथवा किन्हीं अन्य साधनों से पी–एच0डी0 की उपाधियाँ प्राप्त की जाती हैं। इस दोष के निराकरण के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने हर शोधार्थी के लिए अनिवार्य कर दिया है कि शोध प्रबंध प्रस्तुत करने से पूर्व कम–से–कम दो शोध पत्र अवश्य प्रकाशित करायें। कुछ विश्वविद्यालयों ने कम्प्यूटर ज्ञान और शोध प्रबंध की सी0डी0 प्रस्तुत करना भी अनिवार्य कर दिया है।

व्यावहारिक स्तर पर देखने में आया है कि इन प्रयासों से शोध कार्य में बाधा पहुँच रही है। जिस गति से शोधकार्य होना चाहिए था, उसमें अवरोध उत्पन्न हुआ है। शोधकार्य अधिकाधिक व्यवसाध्य और समयसाध्य होता जा रहा है, जिससे नये शोध छात्रों का उत्साह क्षीण हो रहा है, जबकि शोधकार्य को अधिकाधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कई प्रकार की छात्रवृत्तियाँ शुरू की हैं, यहाँ तक कि अनुसूचित जाति, जनजाति के शोधार्थियों के लिए भी छात्रवृत्तियाँ प्रारम्भ की हैं। विश्वविद्यालय अपने स्तर से भी शोध छात्रवृत्ति, अनुदान आदि दे सकते हैं, शोधकार्य की पद्धति का शिक्षण–प्रशिक्षण देकर शोधकार्य के स्तर को सुधार सकते हैं। पर, नये–नये नियम बनाकर अवरोध उत्पन्न करना ठीक नहीं है।

हमारे देश में सैकड़ों विश्वविद्यालय और हजारों महाविद्यालय हैं, फिर भी शोधार्थियों की संख्या अभूतपूर्व स्तर पर कम है। फिक्की की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में स्नातकोत्तर उत्तीर्ण छात्रों में मात्र 0.64 प्रतिशत छात्र ही पी–एच0डी0 करते हैं। इस समय देश की विभिन्न संस्थाओं में लगभग एक लाख तीस हजार शोधार्थी हैं, जबकि चीन में भारत से सात गुना और अमेरिका में दस गुना शोधार्थी हैं। भारत के 'ज्ञान आयोग' की एक सूचना के अनुसार, भारत में 17से 23 वर्ष तक की आयु के मात्र 12 प्रतिशत छात्र ही उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं।

स्पष्टतः, हमारे यहाँ स्नातकोत्तर कक्षाओं में छात्रों की संख्या काफी कम है, और शोधार्थियों की संख्या तो और भी सोचनीय है। हमारे सामने समस्या न केवल शोध छात्रों की संख्या बढ़ाने की है, बल्कि शोधकार्य को स्तरीय बनाने की भी है।

हिन्दी में शोधकार्य, परम्परा का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है, जैसे काल विशेष पर शोधकार्य, विधा विशेष पर शोधकार्य, परम्परा एवं वाद विशेष पर शोधकार्य आदि। रचनाकार के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर भी शोधकार्य प्रचुरता से कराया जाता है। पर, इस सम्बन्ध में कोई विशेष नीति या नियम नहीं है। कुछ विद्वानों या विशेषज्ञों की मान्यता है कि जीवित साहित्यकार पर शोध नहीं कराई जा सकती, पर अधिकांश विद्वानों का मानना है कि यदि रचनाकार के कृतित्व में प्राणवत्ता और सघनता है, यदि उसके सृजन की सार्थकता और प्रासंगिकता है तो पी–एच0डी0 कराई जा सकती है।

इसी तरह कुछ विद्वान मानते हैं कि अल्पज्ञात, अज्ञात और स्थानीय स्तर के साहित्यकारों पर शोध नहीं होना चाहिए। मेरी मान्यता है कि इन पर भी शोध होना चाहिए। अगर रचनाकार में 'दम' है, यदि उसकी रचनाएँ सार्थक और प्रासंगिक हैं, तो शोधकार्य होना ही चाहिए। जब शोधकार्य किया जाएगा, तभी तो अज्ञात रचनाकार को ख्याति मिलेगी, और वह अल्पज्ञात से सुविख्यात व बड़े रचनाकार के रूप में ख्याति प्राप्त कर सकेगा। महाकवि जायसी को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने खोजा, जब उनकी रचनाएँ प्रकाशित हुईं और पाठ्यक्रम का विषय बनी, तभी वे विख्यात् हुए और उन पर सैकड़ों शोधग्रंथ लिखे जा चुके हैं।

वास्तविकता यह है कि अब हिन्दी में शोधकार्य न केवल भारत के विश्वविद्यालयों में किया जा रहा है, बल्कि विदेशों में भी हो रहा है। अनेक विदेशी शोधछात्र हिन्दी कवियों, रचनाकारों पर शोधकार्य कर रहे हैं। रूसी विद्वान् ई0 चेलीशेव का शोधग्रंथ 'सुमित्रानंदन पंत के काव्य में परम्परा और नवीनता' मैनें पढ़ा है। अनेक विदेशी शोधार्थी भारतीय विश्वविद्यालयों में हिन्दी में शोधकार्य कर रहे हैं, और मारीशस, गुयाना, सूरीनाम, नेपाल आदि देशों में सृजित हिन्दी साहित्य पर भी प्रचुरता से शोधकार्य हो रहा है। स्पष्टतः, हिन्दी में शोधकार्य को सीमाबद्ध नहीं किया जाना चाहिए।

विषय–निर्वाचन से पूर्व सबसे पहला कार्य विश्वविद्यालय–चयन और निर्देशक चयन का आता है। यदि शोधार्थी भाषा–विज्ञान के किसी पक्ष को लेकर शोधकार्य करना चाहता है तो सबसे पहले वह उस विश्वविद्यालय या सम्बद्ध महाविद्यालय या संस्था का चयन करेगा जहाँ भाषा–विज्ञान सम्बन्धी शोधकार्य कराए जाते हैं। उसके बाद उस निर्देशक का चयन करेगा जो भाषा विज्ञान की उस धारा विशेष में निष्णात होगा। हिन्दी शोध–क्षेत्र में प्रशिक्षित निर्देशकों का अभाव है। वे शोध की प्रक्रिया–प्रविधि तथा वैज्ञानिक तकनीक से अपरिचित हैं। यही कारण है कि हिन्दी में जो शोधकार्य सम्पन्न हो रहे हैं वे तकनीकी परिज्ञान के अभाव के कारण सुव्यवस्थित नहीं बन पाए हैं। निरीक्षक की भी सीमाएँ होती हैं।

निर्देशक विशेषज्ञ होता है सर्वज्ञ नहीं, उसकी शारीरिक क्षमताएँ भी हैं। एक निर्देशक तीन या चार शोधार्थियों का निरीक्षण–कार्य ही सुविधा तथा सफलता के साथ कर सकता है। 8 या 10 शोधार्थियों का नहीं। इस समय हिन्दी–शोध की सबसे महत्वपूर्ण समस्या है अध्यापन–कार्य तथा अनुसन्धान–कार्य का साथ–साथ चलना। प्राध्यापकगण सानुपातिक रूप से अध्यापन–कार्य में अधिक व्यस्त रहते हैं। यदा–कदा शोधकार्य का निरीक्षण भी कर लेते हैं। योरोपीय तथा अमेरिकन देशों में अनुसन्धान–कार्य अध्यापन–कार्य से पूर्णतया पृथक् है। यही कारण है कि इन देशों के शोधकार्य गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनों ही दृष्टियों से हमारे देश के शोधकार्यों से अधिक महत्व रखते हैं।

पी–एच0डी0 का शोधकार्य निबंध लेखन नहीं है। शोधकार्य का लेखन प्रारंभ करने से पूर्व अपेक्षित पाठ्यसामग्री अर्थात् आधार ग्रंथ, सहायक ग्रंथ, पत्र–पत्रिकाएँ आदि एकत्र की जाती हैं। अगर समस्त साहित्य क्रय करना संभव न हो तो शोध निर्देशक, शोध संस्थान, शोधकेन्द्र, पुस्तकालय, विद्वानों, साथी मित्रों, परिचितों आदि का सहयोग लेना अपेक्षित रहता है।

शोधार्थी को चाहिए कि अधिक से अधिक शोधग्रंथों का सावधानी से अध्ययन करे, और स्वाध्याय से समझे कि शोधग्रंथ कैसे लिखा जाना चाहिए? निःसंदेह निर्देशक या गुरू अथवा गाइड से व्यावहारिक प्रशिक्षण मिल सकता है, पर शोधग्रंथों का अध्ययन अत्यावश्यक है। अगर विश्वविद्यालय विशेष–विशेषज्ञों से व्यावहारिक प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था करें, तो सोने पे सुहागा की स्थिति बन सकती है।

शोधकार्य खोज और पुनर्व्याख्या है। उसे अपनी खोज से भी परिणाम प्राप्त हों, उसे सप्रमाण लिखना होता है। उदाहरणार्थ, हिन्दी के शोधार्थी को अगर विवेकीराय की जन्मतिथि के बारे में लिखना है, तो उन स्रोतों का उल्लेख करना होगा, जहाँ जन्मतिथि का उल्लेख हुआ है। विवेकीराय की दो जन्मतिथियाँ हैं – एक हाईस्कूल के प्रमाणपत्र में उल्लिखित, दूसरी वह जिसका उल्लेख जन्मकुंडली में हुआ है। शोधार्थी को सप्रमाण लिखना होगा कि दो जन्मतिथियों का उल्लेख क्यों मिलता है? किन–किन विद्वानों ने सरकारी प्रमाणपत्रों की जन्मतिथि को मान्यता दी है, और किन विद्वानों ने जन्मकुंडली वाली जन्मतिथि को। शोधार्थी को यह भी प्रामाणिकता के साथ लिखना होगा कि स्वयं विवेकीराय किस तिथि को सही मानते हैं, और स्वयं शोधार्थी का अभिमत क्या है?

शोधग्रंथ लिखेन में कुछ विद्वान शीर्षक की प्रमुखता के अनुसार प्रमुख शीर्षक के लिए 1, दूसरे प्रमुख शीर्षक के लिए 2, फिर उपशीर्षकों आदि के लिए 1.1, 1.4, 1.4,2,3 आदि क्रमांक देकर विषयवस्तु की प्रस्तुति करते हैं, और कुछ विद्वान क्रमांक लिखने में विश्वास न करके, सामान्य रूप से शीर्षक, उपशीर्षक, सहायक व अन्य गौण शीर्षक लिख देना ही पर्याप्त मानते हैं। 90–95 प्रतिशत शोधप्रबंध द्वितीय पद्धति से ही लिखे जाते हैं।

इसी प्रकार, स्रोत–संदर्भ प्रस्तुत करने में पहले क्रमांक, फिर लेखक का नाम, फिर पुस्तक का नाम और फिर पृष्ठ संख्या लिखना उचित माना गया है, जैसे–

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ0 272
2. डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त, पंत की दार्शनिक चेतना, पृ0 42

पुस्तक के उल्लेख के साथ प्रकाशन–संस्थान और प्रकाशन–वर्ष का उल्लेख किया जाना उचित माना गया है, जैसे –

1. डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त, बाबा नागार्जुन, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, सन् 2009, पृ0 42

एक अन्य आवश्यक बात। स्रोत–संदर्भ के उल्लेख हर पृष्ठ में किया जाना चाहिए, अथवा हर अध्याय के अन्त में क्रमानुसार दे दिया जाये? तकनीकी दृष्टि से स्रोत–संदर्भ हर पृष्ठ में दिया जाना चाहिए, पर टंकण और मुद्रण में सुविधा को ध्यान में रखकर हर अध्याय के अंत में एक साथ सारे संदर्भों का उल्लेख क्रमशः कर दिया जाता है।

इस प्रसंग में, विगत् वर्षों में एक प्रवृत्ति और देखने में आयी है। मान लिया कि एक शोधग्रंथ में आठ अध्याय हैं, तो पहले आठों अध्यायों को क्रमशः टंकित करा लिया और अन्त में एक साथ आठों अध्यायों के स्रोत–संदर्भ अध्यायों के शीर्षक और क्रमांक डालकर लिख दिये और टंकित करा लिया। निःसंदेह, यह पद्धति सर्वाधिक आसान है, पर सर्वथा भ्रामक, प्रणाली विरुद्ध और गलत है।

शोधग्रंथ को मूल्यांकन के लिए विश्वविद्यालय में जमा कराने के संदर्भ में विभिन्न विश्वविद्यालयों में पृथक्–पृथक् नियम हैं। कुछ विश्वविद्यालयों में शोधग्रंथ की दो प्रतियाँ जमा कराई जाती हैं, तो कहीं–कहीं तीन–तीन या चार–चार प्रतियाँ भी। इनके साथ ही, अलग से रूपरेखा, शोधकार्य का सारांश और सी0डी0 आदि भी जमा कराई जाती है। शोधग्रंथ जमा करने से पूर्व, प्रायः सभी विश्वविद्यालय मूल्यांकन आदि के संदर्भ में दस–पाँच हजार रुपये शुल्क भी जमा कराते हैं। शोधार्थी के सम्मुख समस्या रहती है कि शोधग्रंथ कितने पृष्ठों का हो?

इस बारे में कोई सुनिश्चित नियम नहीं है, पर सामान्यतः दो सौ से एक हजार पृष्ठों तक के शोधग्रंथ हो सकते हैं। शोधग्रंथ का आकार अर्थात् पृष्ठ संख्या शोधग्रंथ के विषय, शोधार्थी की योग्यता, रूपरेखा की अपेक्षा आदि पर निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, अगर हिन्दी का शोधार्थी 'महाकवि सुमित्रानंदन पंत : व्यक्तित्व और कृतित्व' शीर्षक पर शोधकार्य करे, तब शोधार्थी चाहे तो पंत जी के व्यक्तित्व पर ही चार–पाँच सौ पृष्ठ लिख सकता है, और उनके कृतित्व के विभिन्न पक्षों – उपन्यास, कहानी, निबंध, नाटक, कविता–आदि पर भी हजारों पृष्ठ लिखे जा सकते हैं। उत्तम यह रहेगा कि व्यावहारिक मार्ग को अपनाया जाये, और प्रायः तीन–चार सौ पृष्ठों में शोधकार्य को सीमित रखें। शोधार्थी को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि सभी अध्यायों में समानुपातिकता बनी रहे, अर्थात् प्रायः सभी अध्याय तीस–चालीस से साठ–सत्तर पृष्ठों की सीमा में लिखे जायें।

शोधप्रबंध की साज–सज्जा अर्थात् बाइन्डिंग सुदृढ़ और आकर्षक होनी चाहिए। कागज, टंकण आदि भी अच्छा, सुन्दर, स्वच्छ और दोषरहित रहना चाहिए। सभी शोध निर्देशकों से अपेक्षा की जाती है कि वे शोधार्थी का मौखिक मार्गदर्शन ही न करें, अपितु शोधग्रंथ टंकण में देने से पूर्व एक बार स्वयं भी पढ़ें, ताकि वर्तनी, वाक्यरचना आदि से सम्बन्धित त्रुटियों का निराकरण हो सके।

हिन्दी शोध–मूल्यांकन में शोध–परीक्षक प्रायः निष्पक्ष तथा निस्पष्ट नहीं दिखाई देते हैं। यही कारण है कि शोधार्थी शोध–लेखन में अपने पूर्वाग्रहों के अतिरिक्त शोध–निर्देशक तथा सम्भावित शोध–परीक्षक के पूर्वाग्रहों से भी आक्रान्त रहता है। शोध–परीक्षक आत्म–प्रशंसायुक्त शोध–प्रबन्धों की उपाधि–प्राप्त हेतु संस्तुति कर देते हैं। हिन्दी–शोध–स्तर को गिराने में जहाँ शोधार्थी की मजबूरियाँ उत्तरदायी हैं वहाँ निर्देशक तथा परीक्षक की आत्मश्लाघा तथा उपेक्षा की मनोवृत्ति भी सहायक हैं।

हिन्दी–शोध–क्षेत्र में अधिकांश हिन्दी–शोध प्रकाशित ही नहीं हो पाते। विश्वविद्यालय–अनुदान–आोग प्रकाशन–कार्य में सहायता एवं अनुदान देने में उदारता का परिचय नहीं देता है। यदि शोधार्थी को शोध उपाधि प्राप्त होने के बाद कहीं शिक्षा–क्षेत्र में उपयुक्त स्थान प्राप्त होता है तो वह अपने व्यय पर शोध–प्रबन्ध को प्रकाशित भी नहीं कराना चाहता है। इसका परिणाम यह होता है कि हिन्दी–क्षेत्र में शोधकार्य करने वाले अनेक शोधार्थी अनेक महत्वपूर्ण शोध–प्रबन्धों के अध्ययन से वंचित रह जाते हैं।

कार्यक्षेत्र के हर विभाग में विशेषज्ञता और उत्तरोत्तर स्तर–सुधार की अपेक्षा रहती है। देखा गया है कि चिकित्सा–शिक्षा प्राप्ति व्यक्ति चिकित्सा क्षेत्र में कार्य करता है, सैन्य–प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति सुरक्षा–सेवा में जाता है, और विधि–शिक्षा प्राप्त व्यक्ति न्यायिक सेवा में जाता है, पर यह आवश्यक नहीं कि पी–एच0डी0 उपाधि 'डाक्टर' कहलाने वाला व्यक्ति शिक्षा–सेवा में जाये। डॉक्टर नाम धारक व्यक्ति पुलिस, प्रशासन आदि अनेक विभागों में मिल जाते हैं। होना यह चाहिए कि पी–एच0डी0 करने का अवसर उन्हीं को दिया जाये, जो शिक्षा–सेवा में आना चाहते हैं। सभी विश्वविद्यालयों के लिए शैक्षणिक समय सारिणी का अनुपालन अनिवार्य होना चाहिए, अर्थात् शोध समिति की बैठक, कार्यशाला, प्रपत्र की बिक्री, फार्म जमा करने की तिथि, मौखिकी आदि निर्धारित समय–सीमा के अनुरूप होना चाहिए। कुलपति, कुलसचिव आदि प्रशासनिक पदों पर आसीन व्यक्तियों को शोधकार्य में बाधा डालने जैसे कार्यों से दूर रहना चाहिए। उन्हें केवल प्रशासन पर ध्यान देना चाहिए, ताकि सब कार्य सुचारु रूप से और समय से सम्पन्न हों। शोध समिति और हर विषय के पृथक–पृथक सदस्य, समन्वयक आदि होते हैं, जो संस्तुति करते हैं कि शोधग्रंथ मूल्यांकन हेतु किन विद्वानों–विशेषज्ञों को भेजा जाये। विशेषज्ञ परीक्षक चयन में कुलपति और कुलसचिव का हस्तक्षेप सर्वथा अवांछनीय है। सभी विश्वविद्यालय शोधकार्य के निर्धारित प्रपत्र बेचते हैं। विश्वविद्यालयों को चाहिए कि फार्म के साथ ही, अब तक हुए शोधकार्य की सूचना–पुस्तिका उपलब्ध कराएँ, ताकि विषय की पुनरावृत्ति न हो सके। इसके अतिरिक्त शोध–प्रविधि सम्बन्धी पुस्तिका भी प्रत्येक शोधार्थी को उपलब्ध कराई जानी चाहिए। सभी विश्वविद्यालयों को चाहिए कि स्तरीय शोधग्रन्थ का प्रकाशन अपनी ओर से कराएँ तथा विश्वविद्यालयों को अपनी वेबसाइट को अद्यतन (अपडेट) किया जाना चाहिए।

हिन्दी शोध ज्ञान साधना के पवित्र मन्दिर में मनसा, वाचा, कर्मणा, सेवापरायण शोधार्थी, शोध निर्देशक तथा शोध–परीक्षकों को ही प्रवेश करना चाहिए। सस्ती लोकप्रियता चाहने वाले तथा अर्थाभिलाषी शोधार्थियों को इस क्षेत्र को अपवित्र नहीं करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *रिसर्च मेथाडलॉजी – वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर संस्करण–2004*
2. *रिसर्च मेथाडलॉजी – वन्दना वोहरा, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, संस्करण–2007*
3. *अनुसन्धान का स्वरूप – डॉ0 सावित्री सिन्हा, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, संस्करण–1990*
4. *शोध–प्रविधि – डॉ0 विनय मोहन शर्मा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, संस्करण–1973*
5. *हिन्दी अनुसन्धान – डॉ0 विजयपाल सिंह, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, संस्करण–1978*

संगीत में शोध की आवश्यकता

शालिनी गुप्ता
शोधकत्री
संगीत विभाग
चौधरी चरण सिंह वि.वि.
मेरठ

वर्तमान काल में संगीत जहाँ शिक्षा का आवश्यक अंग बनता जा रहा है, वहॉ इस क्षेत्र में नये–नये शोध की अत्यन्त आवश्यकता है, जिससे इसे नये रस्ते मिल सके। संगीत में शोध के अत्यन्त व्यापक क्षेत्र है। संगीत प्रयोगात्मक कला होने की वजह से इसके स्वरूप की कुछ विशेषतायें व सीमायें भी है, इसलिये इसकी शोध पद्धति और विषयों से भिन्न है। संगीत एक अमूर्त कला है इसलिये इसमें शोध का स्वरूप अन्य कलाओं और विषयों से अलग होना और भी ज्यादा स्वाभाविक है। इस कारण संगीत में शोध प्रविधि की तरफ ध्यान देना और भी अधिक आवश्यक लगता है। शास्त्रीय संगीत, लोकसंगीत, जन–जातीय संगीत, अन्तर्विधायी शोध, प्रयोगधर्मी विषय–वस्तुओं पर आधारित शोध, पाठ संशोधन के सिद्धान्त और समस्याएं, कुछ ऐसे पक्ष है जिन पर विचार करना संगीत में शोध की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है।

शोध की समस्या चाहे प्रयोगात्मक हो अथवा विवरणात्मक यह जरूरी है कि उसका अध्ययन एक सुनियोजित एवं क्रमबद्ध पद्धति के साथ हो। समस्या का चयन, तथ्यों का आंकलन तथा उनका सूक्ष्म निरीक्षण तथा वर्गीकरण, विश्लेषण अन्य किसी भी अनुशासन की शोध प्रविधि की भांति ही करना अपेक्षित है तभी सांगीतिक शोध में सामान्यीकरण हो जायेगा।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाजविज्ञानों के क्षेत्र में गुणात्मक शोध की संभावनायें

विजय सर्राफ
एसोसिऐट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान
राजकीय पी.जी.कॉलेज,झालावाड़
झालावाड़, राजस्थान

सारांश

वैश्वीकरण के इस दौर में संचार क्रांति एंव भूमंडलीकरण ने विश्व में क्रांति पैदा कर दी है। विश्व संकुचित हो गया है ओर व्यक्ति की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। इस भूमंडलीकरण, उदारीकरण एवं निजीकरण की मानसिकता और पहल ने नवीन क्षेत्र, नवीन सृजन और नवीन अनुसंधान के मार्ग सृजित किये है जिसकी वजह से हमें यह सोचने को बाह्य होना पड़ रहा है कि अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर हमारी पहुँच कहां तक है ? हम विश्व मे किस सोपान पर है ? क्या हमारे अनुसंधान, हमारे शोध, हमारे सृजन गुणवत्ता में इतने श्रेष्ठ हे कि हम विश्व में अपने आपको स्थापित कर सके।

मुख्य शब्द : अनुसंधान, गुणवत्ता, भूमंडलीकरण, उदारीकरण, निजीकरण, सोपान, आध्यात्म।

शोध के परिपेक्ष्य में हमें देखना होगा कि वास्तव में शोध है क्या ? मात्र तथ्यों का अन्वेषण, संकलन एंव समापन ही शोध नही है, वरन शोध जीवन की प्रत्येक क्रिया चाहे विज्ञान हो, तकनीकि हो, अध्यात्म हो, ज्योतिय हो, तंत्र–मंत्र शास्त्र हो, वेद पुराण हो या हमारी संस्कृति हो सभी समाज विज्ञानो में समाहित है, प्रत्येक क्षेत्र में उत्तम सृजन की, नई खोजो की, नई दिषा की, और विश्व को नई दिशा दिखाने की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। यह दौर प्रतिस्पर्धा का है। विश्व की दृष्टि भारत पर है और इसीलिये हर क्षेत्र में नवीन शोध की प्रबल संभावनाये है। आज बाबा रामदेव के योग ने पातंलिल के योग को व्यापक संभावनायें दी है, विश्व के प्रत्येक देश का झुकाव योगविज्ञान की और हुआ है। आध्यात्मक के क्षेत्र में भारत पहले ही विश्व गुरू के शिखर पर है। यानि कि हर क्षेत्र में व्यापक संभावनायें है कि हम शोध के क्षेत्र में नये आयाम पैदा करे।

शोध से सामान्यतः अभिप्राय खोज से है, चाहे अवलोकन द्वारा हो, तथ्यो पर आधारित हो या साक्ष्यो पर। हम विभिन्न सर्वेक्षण पद्वतियों का समुचित प्रयोग कर निष्कर्ष पर पहुँच सकते है। वेवस्टर शब्दकोष के अनुसार, "तथ्यो एंव सिद्वांतों या किसी घटना को ज्ञात करने हेतु सावधानीपूर्वक एवं विवेचनात्मक खोज या निष्ठापूर्वक किये गये अन्वेषण को अनूसंधान या शोध कहते है।"

समय की तेजी से बदलती धाराओं के साथ हमें कैसे सामंजस्य स्थापित करते हुये आगे बढ़ना है, आने वाली समय की धारा हमें कहां ले जायेगी, विश्व की राजनीति में, सामयिक व्यवहार में, आर्थिक नीतियों में, मनोवैज्ञानिक विचारधाराओं में, देशों के पारस्परिक संबंध और उनमें छुपी प्रतिस्पर्धा की मानसिकता को हमें केसे टटोलना है कैसे सावधान रहना है ? कहां परिवर्तन के संकेत हे एवं विपरीत धाराओं से हम कैसे मुकाबला करते हुये अपने वर्चस्व को कायम रख पाने में समर्थ हो सकते है ? यही वास्तव में वर्तमान में शोध के विषय है, जो हमारे अस्तित्व को कायम रखने से जुडे हुये है। इसके लिये हमें अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर शोध की गुणवत्ता बढ़ा कर अपने आपको स्थापित करने की आवश्यकता है।

शोध का उद्देश्य मात्र डिग्री प्राप्त करना या शोध पत्र प्रकाशित करवाने ए.पी.आई में अंको की वृद्वि करना नही होना चाहिये। शोध पत्र का उद्देश्य किसी भी समस्या का तार्किक विवेचन, तथ्यो की सत्यता एंव समस्या के समाधान हेतु रचनात्मक सुझाव होना चाहिये। इसके लिये हमारी मानसिकता, कितनी एकाग्र एंव समस्या पर शोध के निष्कर्ष करते है।

वतमान समय में विज्ञान, तकनीकि, व्यवसाय, कम्प्युटर, इन्टरनेट, टेलीकॉम आदि क्षेत्रो में बहुराष्ट्रीय कंपनियो के वजह से निरंतर शोध हो रहे है और भारतीय शोधार्थियो ने अच्छी पकड़ भी बनाई है। लेकिन आवश्यकता सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में भी उतनी ही है, जिसे हमें विकसित करने की महती आवश्यकता है।

सामाजविज्ञानों में, जो विशेष रूप से 19वी शताब्दी की ही देन है, राजनीतिविज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, भूगोल, इतिहास, मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र, आध्यात्म विज्ञान के साथ हमारी भाषायें जो अनेकानेक भाषाओं की जननी है, के क्षेत्र में प्रबल शोध की जरूरत है।

वैश्वीकरण के दौर में जहा वसुधैव कुटुम्बकम की उक्ति सार्थक हो रही है, वहां राजनीतिक नीतियाँ, कूटनीतिक नीतियाँ, मतदान व्यवहार, प्रजातंत्र का अस्तित्व, गेर समझौते का व्यवहारिक प्रभाव, स्वार्थो की राजनीति, सम्पूर्ण विश्व मे व्याप्त भ्रष्टाचार की समस्या, प्रत्येक देश का अपने स्वार्थो को सर्वोपरि रखकर नीतियो का निर्धारण, पडौसी राज्यो की स्वार्थपरता, विश्व के समीकरणों में निरंतर परिवर्तन, अमेरिका व रूस की नीतियो में परिवर्तन, चुनावो में धांधली (अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर) विदेशों में अपने नागरीको की सुरक्षा के लिए किये जाने वाले प्रयास, देश के हितो का विश्व में सटीक प्रतिनिधित्व आदि अनगिनत ऐसे मुद्दे है, जिन पर शोध करना और समस्याऔ के समाधान के लिए प्रयास करने की दिशा में शोध सार्थक हो सकती है।

आर्थिक क्षेत्र में जो व्यापक परिवर्तन विश्व स्तर पर हो रहे है, निरंतर में बदलाव हो रहा है। जिसका प्रभाव हमारी घरेलू आर्थिक नीतियों पर एवं अर्थव्यवस्था पर पड़ रहा है, आम जनता में आर्थिक नीतियों को लेकर एक असुरक्षा की भावना है, व्यक्ति सरकार की रोज परिवर्तित होती नीतियों से भयाकृांत है। ये सब मुद्दे हमारे शोध का विषय हो सकते है, इस दिषा में पहलकर हम निष्कर्ष निकालकर नीति निर्धार को मदद करने में सहयोग कर सकते है। इसी प्रकार एतिहासिक क्षेत्र में, भौगोलिक क्षेत्र में, मनोविज्ञान के क्षेत्र में शोध की विपुल संभावनाये है।

आध्यात्म एंव संस्कृति के क्षेत्र में पूरे विश्व की नजर हमारे वेदो पर टिकी हुई है। यहां तक कि नासा ने वेदो को खरीदने का प्रस्ताव भी रखा था जो हमारी सरकार ने ठुकरा दिया। वेदो की यदि सही व्याख्या की जाये तो हमारे देश को षिखर तक पहुँचने से दुनिया की कोई ताकत नही रोक सकती। इसका उदाहरण दक्षिण भारत का कक्षा आठ में पढने वाला वह बच्चा है जिसने सामवेद के श्लोक के चौथाई हिस्से की व्याख्या कर चुम्बकीय बिजली पैदा करने की तकनीक खोज ली। यदि पूरे वेदो की समुचित व्याख्या एंव समझने का प्रयास हो एंव ईमानदारी से शोध हो तो हम कहां पहुँच सकते हैं, ये हम सोच भी नही सकते।

प्राचीन विचारक शुक्र ने शिक्षा में चार विधाये बताई थी आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता और दंडनीति। भारत का प्राचीन साहित्य एंव संस्कृति इसी पर आधारित है आन्वीक्षिकी एंव त्रयी से अभिप्राय हमारे वेद, पुराण एवं ठीकानों से है। वार्ता से अभिप्राय कामर्स से है एंव दंडनीति का मतलब राजनीति से है, जिस पर सारी प्रशासकीय व्यवस्था निर्भर करती रही है। हमारी प्राचीन राजतंत्रीय व्यवस्था ने सफलता पूर्वक कार्य किया है। इस सफलता को समझने में यूनान के विचारक तक असमर्थ रहे है।

इसी प्रकार वर्तमान प्रजातंत्र जो विश्व का सबसे बडा प्रजातंत्र है, तमाम चुनौतियो के बाबजूद सफलता की और निरंतर अग्रसर है। भारतीयों की मानसिकता, आध्यात्मिकता एंव चुनौतियों का मुकाबला करने की क्षमता निसंदेह शोध का विषय है। हमारी संस्कृति की आस्था की प्रतीक ग्रथं 'राम चरित मानस' एंव 'भागवत गीता' विश्व के तमाम विश्वविद्यालयो में मेनेजमेंट कोर्सेज में प्रषासनिक एंव कूटनीतिक नीतियो के लिये शोध का विषय बनी हुई है।

तात्पर्य यह है कि यदि समाजविज्ञानों के किसी भी मुद्दे को लेकर ईमानदारी से शोध किया जाये तों यह हमें निरंतर नई पहचान प्रदान करने की और अग्रसर करेगा। लेकिन दुखद पहलु यह है हमें शोध के न तो प्रर्याप्त अवसर मिल रह ह और न ही प्रर्याप्त संसाधन। उच्चतम तकनीक का अभाव है, विषय सामग्री क्रमबद्व नही है, वैचारिक मतभेद के साथ परस्पर प्रतिद्वंदता का बोलबाला है। आर्थिक संसाधनो का अभाव है।

निष्कर्ष

अतः यद्यपि समाज विज्ञान के क्षेत्र में गुणवत्ता पूर्ण शोध की प्रबल संभावनाये तो है लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि हमें सर्वप्रथम प्रतिभाओं का पलायन रोकना होगा। अपने देश में शोधार्थियो को प्रर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराने होगे, आर्थिक क्षेत्र में प्रर्याप्त सुविधाये देनी होगी, शोध के क्षेत्र को राजनीति से, भ्रष्टाचार से एवं भाई भतीजावाद से मुक्त करना होगा। प्रतिभाओं का यथोचित सम्मान करते हुये प्रर्याप्त सहुलियते प्रदान करनी होगी ताकि उनमें राष्ट्र के प्रति समर्पण एंव श्रेष्ठता की भावना पैदा हो सके। तभी हमारे शोध, अनुसंधान आदि उच्च स्तर को प्राप्त कर सकेंगे और उनकी गुणवत्ता में सुधार होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *'रिसर्च इन एजुकेशन', आर ए. शर्मा*
2. *'रिसर्च मेथडस' डी.एन श्रीवास्तव*
3. *'अनुसंधान व्यवस्था विज्ञान' शशि के. गुप्ता*
4. *'रिसर्च मैथांलॉजी' दीपक चावला एन्ड मीना सौधी*
5. *'रिसर्च मैथांलॉजी : मैथडस एन्ड टेकनीक' सी.आर कोठारी*
6. *'सेन्सिटिव टॉपिक्स इन सोसल इन्वालविंग चिल्डरन' जर्नल इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ सोसल रिसर्च मैथांलॉजी पब्लिषड ऑन लाईन।*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

लेखन की बड़ी समस्या– साहित्यिक चोरी

शीतल बाजपेयी
शोधार्थी,
सोशल रिसर्च फाउण्डेशन,
कानपुर

अनामिका मिश्रा
शोधार्थी
हिन्दी विभाग
कैलिफोर्निया, अमेरिका

किसी दूसरे के विचार, भाषा, शैली, कहन, को अक्षरशः नकल करते हुये अपनी मौलिक कृति के रूप में प्रस्तुत करना साहित्यिक चोरी (plagiarism) कहलाती है।

मिलावट और साहित्यिक चोरी उस रचना से छेड़ छाड़कर उसकी मौलिकता को खत्म कर देते हैं या उसे घिसापिटा बना देते हैं। मिलावट में भ्रष्ट संस्करण के ही मूल होने का दिखावा किया जाता है, जबकि साहित्यिक चोरी खुद को मौलिक होने का दिखावा करती है.. प्रेरित होना और नकल करना दोनों में बहुत अंतर है,, अक्सर लोग अपने–अपने क्षेत्र के महारथियों से प्रेरणा लेकर उस क्षेत्र का चयन करते हैं, यह बहुत स्वाभाविक बात है।

नकल, सीखने की पहली सीढी है इस बात को भी अस्वीकार नही किया जा सकता।

विद्यार्थी और शोधार्थी के बीच यही मुख्य भेद है, जब तक आप विद्यार्थी हैं तब तक नकल ही करते है, पर शोधार्थी बनते ही आप अब उस ज्ञान से जो आपने अर्जित किया है अपने पंखो को खोलकर खुले गगन में उड़ सकते हैं।

जहाँ विचारो को एक नया दृष्टिकोण मिले।

कहन का सलीका हर किसी का अलग होता है, बिल्कुल उसी तरह जैसे हर किसी का बात करने का तरीका अलग अलग होता है।

इसलिये किसी के विचार को कहन के साथ अपना कहना निंदनीय है।

आजकल सोशल साइट्स पर ऐसी चोरियों की बाढ़ सी आ गयी है, क्योकि कापी–पेस्ट करने में किसी भी प्रकार का कोई श्रम तो लगता नही। लोग अक्सर यह आरोप भी लगाते है कि मेरे कैनवास पर फलाँ ने अपनी बात कह दी।

अर्थात विचार मेरा था और उसने इस पर अपनी कविता या कहानी कह दी,, ऐसी सूरत में इसका बचाव और भी कठिन हो जाता है क्योकि विचारो की चोरी होती तो है इसमे कोई दोराय नही। हाल ही में राजीव मल्होत्रा को लेकर हुआ विवाद दिखाता है कि इस तरह की साहित्यिक चोरी शोध के लिए खतरा है। विद्वान रिचर्ड फॉक्स यंग ने बड़े दिलचस्प तरीके से इशारा किया कि मल्होत्रा ने एंड्र्यू जे निकोल्सन की कृति से नकल की थी। भारत से जुड़े पहलुओं का अध्ययन करने वाले कई पश्चिमी विचारकों के लिए यह हंसी का कारण बन गया।

मल्होत्रा का जवाब तो और दुखद था. पहले तो उन्होंने कहा कि संस्कृत में उद्धरण या कोटेशन मार्क्स का कोई चलन नहीं है और यह पश्चिमी परम्परा है। इसके बाद उन्होंने कहा कि निकोल्सन का हवाला दिया गय था, लेकिन कोटेशन मार्क्स को लेकर थोड़ी कंजूसी बरती गई थी और ये तर्क यकीन करने लायक नहीं लगा।

(साभार BBC news)

सुझाव

यदि आपको यह चिंता है कि आपके द्वारा दी गई कोई चीज किसी दूसरे की लगती है, तो संभवतः यह इसलिए है क्योंकि वह दूसरे की ही होगी।

कुछ विद्यालयों में ऐसे प्रोग्रामध्सेवाएँ होती हैं जिनसे लेखों की जांच साहित्यिक चोरी के लिए की जा सकती है। यदि आप बहुत चिंतित हैं, तब शायद आप ये सेवाएँ लेना चाहेंगे।

यदि आप कोई ऐसी चीज इस्तेमाल करते हैं जो विशुद्ध आपकी ही है, तब हमारा तो यही कहना है कि कम से कम यह तो बताइये कि यह आपका विचार है। अन्यथा, आपके अध्यापक भूल से, उसको बिना उद्धृत की गई सामग्री समझ कर, आप पर झूठमूठ ही साहित्यिक चोरी का आक्षेप लगा देंगे।

यदि आप ईमानदारी से कोई लेख या निबंध लिख रहे हों, तब साहित्यिक चोरी की संभावना बहुत कम हो जाती हैं। यदि आप इस तथ्य से अवगत हैं कि आप किसी और की कृति की नकल कर रहे हैं, तब आप पकड़े ही जाएँगे।

चीजों को अपने शब्दों में लिखने के लिए यह एक सुझाव है। गूगल के भाषा टूल का इस्तेमाल करके लेख को किसी अन्य भाषा में अनुवादित कर लीजियेरू जैसे कि अङ्ग्रेजी से जर्मन। तत्पश्चात उसे वापस गूगल के भाषा टूल में पोस्ट करिए और उसको किसी अन्य भाषा में अनुवादित कर लीजियेरू हमारे उदाहरण के अनुसार, जर्मन से पुर्तगाली। उसके बाद उसका अनुवाद वापस अङ्ग्रेजी में कर दीजिये। अब आपके पास कठिनाई से समझ में आने वाला, टूटी फूटी अङ्ग्रेजी में लिखा लेख होगा। लेखों को पढ़कर और शोध करके आपने जो जानकारी प्राप्त की है, उसका उपयोग करते हुये, अब आप टूटी फूटी अंग्रेजी वाले लेख को ठीक कर सकते हैं तथा उसपर अपने प्रभाव को भी डाल सकते हैं।

यदि आपको लगता है कि कोई चीज साहित्यिक चोरी है, तब या तो Grammarly-com या किसी अन्य साहित्यिक चोरी वाली साइट पर जा सकते हैं।

यदि आपको नकल करनी ही है, '''पूरे पृष्ठ या अनुच्छेद की नकल न करें!''' इसके स्थान पर, अधिकांश चीजें अपने शब्दों में कहिए, तथा नकल किए गए भाग को उद्धृत करिए। तत्पश्चात उचित संदर्भ फारमैट का प्रयोग करते हुये अपने स्त्रोत का उद्धरण दीजिये। EasyBib-com का प्रयोग करते हुये अपने स्त्रोतों का उद्धरण उचित फारमैट में दीजिये।

बाद में देने के स्थान पर, प्रयोग करने के तुरंत बाद अपने स्त्रोतों का उद्धरण दीजिये। अन्यथा आप एक (या अनेक) उद्धरण देना भूल सकते हैं और यह साहित्यिक चोरी कहलाएगी।

चेतावनी

एक ही (या एक जैसे) लेख को दो या अधिक कक्षाओं के लिए प्रस्तुत करना आत्म साहित्यिक चोरी कहलाती है। शायद आप पहले प्रस्तुत किए गए लेख के कुछ हिस्से या विचार फिर से इस्तेमाल कर सकते हैं, परंतु केवल प्रशिक्षक की अनुमति पाने के बाद तथा स्वयं का उद्धरण देते हुये और आप अपने पहले प्रस्तुत किए गए किसी भी चीज की व्याख्या अपने शब्दों में नहीं कर सकते हैं।

साहित्यिक चोरी के प्रयास का जोखिम मत उठाइये। इससे न केवल आपकी परीक्षा के परिणामों पर, अपितु आपके अध्यापकों और साथियों के बीच आपके सम्मान एवं ख्याति पर भी असर पड़ सकता है। अनेक कॉलेज और विश्वविद्यालय उन छात्रों निकाल देते हैं जो जान बूझकर साहित्यिक चोरी करते हैं।

कक्षा में लिए गए नोट्स, तथा वह स्रोत सामग्री जिसे आपने दूसरे फारमैट में लिखा हो, आपका कार्य नहीं कहलाएगी तथा यदि आपने उसका उपयोग असाइनमेंट में किया है तो उसे उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है। हालांकि आपने स्वयं नोट्स लिए हैं तथा असाइनमेंट अपने तरीके से लिखा है, और तब भी दूसरों की कृति का उपयोग किया हो, तो आपको अपने अध्यापक तथाध्या मूल स्त्रोत के लेखक को उद्धृत करने की आवश्यकता होगी। (जैसे कि, यदि आपने ऑनलाइन प्राप्त गणनाओं के आधार पर कोई पाई चार्ट बनाया है, तो आपको इंटरनेट के स्त्रोत तथा उस गणना का जिससे आपने पाई चार्ट बनाया हो, उद्धरण देना तब भी आवश्यक होगा जबकि पाई चार्ट आपने स्वयं बनाया हो)

किसी और के द्वारा कुछ शब्द या उक्तियाँ सम्मिलित अथवा परिवर्तित करके आपके लेख का सम्पादन करने से भी यह माना जाएगा कि किसी और ने आपके लेख का कुछ भाग लिखा है तथा उसे भी साहित्यिक चोरी माना जाएगा।

शोध विधियां

प्रमोद अमेटा
व्याख्याता
शिक्षा शास्त्र विभाग
वी.बी.जी.एस.टी. टी. कालेज
उदयपुर, राजस्थान

सारांश

मानव प्रगति में अनुसन्धान का सर्वाधिक महत्व रहा है अनुसन्धान का समप्रत्यय नवीन वस्तु या ज्ञान या कुछ नवीन सिद्धान्तो के आधार पर अन्वेषण करना है। अनुसंधान के अन्तर्गत शोध विधियों का महत्वपूर्ण योगदान है। शोध विधि ही एक ऐसा माध्यम है जो क्षैत्र प्रमुख की समस्या का अध्ययन कर उसी के अनुरूप–प्रयोग के रूप में काम ली जाती है। ज्ञान के विकास में हेतु अनुसंधान अति आवश्यक है साथ ही अनुसंधान में किन विधियां को प्रयुक्त किया जाना है यह अति महत्वपूर्ण है प्रस्तुत शोध के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। अनुसंधान प्रक्रिया में अनुसंधान विधिया बहुत महत्वपूर्ण होती है।

मुख्य शब्द– अनुसन्धान, शोध विधिया

प्रस्तावना

अनुसन्धान तथा विभिन्न शैक्षिक क्रियाओं के माध्यम से हम लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास करते हैं शिक्षण समस्या, विद्यार्थियों के व्यवहार के विकास से संबंधित समस्या, एवं अन्य समस्याओं का अध्ययन हम अनुसन्धान प्रक्रिया के माध्यम से ही करते है। ''अनुसंधान क्या है'' अनुसंधान का सामान्य समप्रत्यय खोजना होता हैं सामान्य रूप से अनुसंधान उपलबध संमकों की तरह में पहुंचकर निष्कर्ष निकालना, नये नये सिद्धान्तों की खोज करना तथा प्राप्त समंको का विश्लेषण करना ही अनुसंधान के अन्तर्गत आता है।

अनुसंधान में भी समंको का संग्रहण अनुसेंधान समस्या पर आधारित होता है। समस्या के अनुसार उपुयक्त शोध विधि हमारे अनुसंधान में उपयोगी साबित होती साथ ही हम यह जान पाते है कि समस्या किस प्रकार की है। एवं हमे किस विधि का चयन करना है। वर्तमान में अनुसंधान में शोध विधि की आवश्यकता महत्वपूर्ण है।

विधि का अर्थ

परिभाषा

प्रत्येक अनुसंधान एक विशेष प्रकृति की समस्या का वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करता हैं हैनरी लेस्टर स्मिथ ने 131 शब्दावलियों की सूची प्रस्तुत की है जिसमें शिक्षा संबंधी अनुसंधानो के विभिन्न प्रसगों व विभिन्न रूपो का प्रयोग किया है। वास्तव में हम विधियां न कहकर अनुसंधान के प्रकार कहे तो यह तर्क संगत ही होगा।

विधि कार्यो के अनुक्रम की नियमित संख्या को निर्देशित करता है जो साधारणतः दिशा के द्वारा निर्दिष्ट होता है (1973 एच.एस.ब्राउडी) विधि वास्तव में से एक क्रमिक अवशेष है जिसमें विशेष विधि को उसी प्रकार निर्धारित करते है जैसे उद्देश्य साधन और अन्तर्वस्तु को निर्धारित करता है तथा शुद्ध साहित्य में लेखन शैली एवं व्यवहार को निर्धारित करता है। अनुसंधान की विधियों को निम्नलिखित रूप में समझ सकते है।

अनुसंधान विधियों को निम्नलिखित रूप से समझ सकते है।

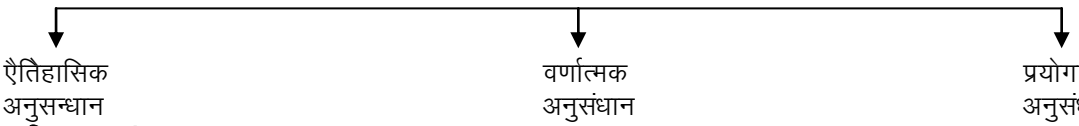

ऐतिहासिक अनुसंधान

ऐतिहासिक अनुसंधान का संबंध अतीत की घटनाओं विकास क्रमों तथा विगत अनुमतियों का तर्क संगत अन्वेषण से है। ऐतिहासिक घटनाओं उनके कारणों और उनसे उत्पन्न समस्याओं तथा परिणामों का बारिक निरूपण विशलेषण करना ही ऐतिहासिक अनुसंधान कहलाता है जॉन डब्लू वेस्ट ने कहा है कि ''ऐतिहासिक अनुसंधान का सम्बन्ध ऐतेहासिक समस्याओं के वैज्ञानिक विश्लेषण से है इसके विभिन्न भूत के संबंध में एक नई सूझ पैदा करते है। जिसका संबंध वर्तमान एवं भविष्य से होता है।''

इसके क्रमिक चरण में समस्या को समझना, सुसीमितीकरण, अनुमान का स्पष्ट व्यक्तिकरण, उसके पश्चात समंक का एकत्रीकरण व्यवस्थीकरण, परीक्षण, मान्यीकरण, विश्लेषण, अनुमान की तथ्यात्मक जांच परख, ऐतिहासिक विवरणों का आलेखन प्रमुख है।

ऐतेहासिक अनुसंधान की दत्त सामग्री को प्राप्त करने के लिये जो ऐतिहासिक स्त्रोत काम में लिये जाते है उनमें ऐसी लिखित सामग्री जैसे राज पत्र, राज्यादेश शिलालेख, चरित्र, लोक कथाएं, रीति–रिवाज, व्यक्तिगत डायरीयां, एवं प्रकाशित पुस्तके प्रमुख है।

वही ऐतिहासिक अवशेष– पुरानी इमारतो के खण्डहर, इमारतों में काम ली गई ईटें, बर्तन, डाक टिकट, मुद्रांए, मानवच एवं पशुओं के शारीरिक अवशेष, प्रतिमाएं चित्र आदि अतित की भौतिक वस्तुएं जों उस समय के जन जीवन पर प्रकाश डालती है।

वर्णात्मक अनुसंधान

वर्णात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध किसी व्यक्ति विशेष से न होकर सम्पूर्ण समस्या अनसंख्या अथवा न्यादर्श से होता है। वर्णात्मक अनुसंधान ''क्या है'' इसका वर्णन एवं विश्लेषण करता है। यह अनुसंधान वर्तमान स्थिति के स्पष्टीकरण, भावी नियोजन तथा परिवर्तन में सहायक है। साथ ही समस्या के समाधान हेतु उपयोगी सूचना पदान करती है। वर्णात्मक अनुसंधान में निम्नलिखित पद प्रमुख होते है। सर्वप्रथम अनुसंधान समस्या के कथन को स्पष्ट किया जाता है साथ ही यह निश्चित किया जाता है समस्या सर्वेक्षण अनुसंधान के लियें उपयुक्त है उसके पश्चात उपयुक्त सर्वेक्षण विधि का चयन किया जाता है। साथ ही सर्वेक्षण उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है साथ ही सर्वेक्षण की सफलता का निर्धारण करना एवं आकड़े प्राप्त करने का अभिकल्प निर्मित कर आंकड़ों का संग्रह, आकड़ो का विश्लेषण कर प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।

यह विधि सरल है अतः इसके द्वारा शिक्षण स्तर में सुधार में सुझाव, विचार, मत आदि या आकड़े सरलता से प्राप्त किये जा सकते है। वर्णात्मक शोध छात्रों, विद्यालय, संगठन, निरीक्षण प्रशासन, पाठयक्रम, शिक्षण विधि और मूल्यांकन से संबंधित समस्याओं के समाधान में अत्यधिक सहायक है।

प्रयोगात्मक अनसुन्धान

प्रयोगात्मक अनुसंधान एक प्रयोग है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि विशेष परिस्थिति में यदि कोई विधि से कोई एक क्रिया कि जाये तो क्या परिणाम होगा। प्रयोगात्मक अनुसंधान इस तथ्य का स्पष्टीकरण करता है कि जब सम्बन्धित चरो अथवा परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक नियंत्रण करकें प्रयोगात्मक चर में परिवर्तन किया जायें तो क्या निष्कर्ष प्राप्त होगा। चर की मापन प्रक्रिया को प्रायोगिक इकाई के रूप में जाना जाता है। प्रयोगात्मक अनुसंधान में विशेष शब्दों का प्रयोग होता है जिसका ज्ञान प्रयोगात्मक अनुसंधान को समझने में सहायक है।

व्यवहार

वह प्रायोगिक दशा से है जो प्रयोगात्मक अध्ययन के लिये प्रस्तुत की जाती है।

व्यवहार चर

उस चर कों कहा जाता है। जिसका प्रयोगकर्ता परिवर्तन करता है। व्यवहार चर स्वतन्त्र चर है। जिसका परिवर्तन अनुसंधानकर्ता द्वारा किय जा रहा है। प्रयोग में व्यवहार चर के रूप में पढ़ाने की विधि, पाठ्यपुस्तक के अनुसार पाठ्यपुस्तक में स्याही का रंग। छापे का आकार कुछ ही तो सकता है।

परतन्त्रचर

वह चर जो स्वतन्त्र चर अथवा व्यवहार पर से के परिवर्तने से प्रभावित होता है। स्वतन्त्र चर भी एक से अधिक हो सकते है। उसी प्रकार परतन्त्र चर भी एक या एक से अधिक हो सकते है।

ब्राहाचर

यह चर या तो विषयी वातावरण में स्थित होते है या उसके व्यक्तित्व के कुछ गुण हो है। उदाहरणार्थ, उसकी क्षमता, बुद्धि, लिंग, आयु परतन्त्र चर में होने वाले परिवर्तन को प्रभावित करते ह। इन चरों के लिये इन्टर वीनिंग तथा कनफाउण्डिंग शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

प्रयोगात्मक अनुसंधान के प्रारूप में व्यक्ति, समुदाय, या दो अथवा समान, अनुरूप दलों का निर्माण कर किया जाता है। समान समुदाय का निर्माण स्वविवेक, से या परीक्षण के द्वारा, औसत प्राप्तांक के आधार पर किया जा सकता है। प्रयोग बारी–बारी से दोनों समुदाय के साथ, एक बार एक समुदाय को प्रयोगात्मक, और, उसकी बार दुसरे समुदाय को प्रयोगात्मक समूह बनाकर दुहराया जा सकता है। और परिणाम प्राप्त कर अध्ययन किया जा सकता है। ऐसे परिणाम जो पारी के अदल–बदल से प्राप्त होगें जो अपेक्षाकृत अत्यधिक विश्वसनीय होगें। इसमें निरिक्षित व्यवहार के प्रभावों को सत्य प्रभाव माना जाता है। आधुनिक रूप में यह शोध विधि अति महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष

वास्तव में अनुसंधान के अन्तर्गत कई समस्याऐं उत्पन्न होती है। समस्या उचित निराकरण, एवं समाधान अनुसंधानकर्ता को स्वयं चिन्तन के अनुसार करना होता है। अनुसंधानकर्ता अनुसंधान के लिये जिस समस्या का चयन करता हैं वास्तव रूप में उस समस्या के कारणों को जानने के लिये किस विधि का उपयोग करना चाहियें वह समस्या के अनुरूप निर्धारित की जाती है। प्रत्येक शोध विधि का अपना स्वयं का महत्व है। इस के माध्यम में अनुसंधानकर्ता यह जान पायेंगे कि वास्तविक रूप से अनुसंधान हमारे जीवन का महत्वपूर्ण पहलू है। अनुसंधान शिक्षा के स्वस्थ दर्शन पर आधारित है। अनुसंधान कार्य–कारण संबंधों पर आधारित है। अनुसंधान के अन्तर्गत शोध विधि अपना महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती है। अनुसंधान की समस्या के अनुरूप शोध विधि के चयन से न केवल निष्कर्ष विश्वसनीय एवं शुद्ध प्राप्त होंगे। अपितु अनुसंधान में और क्या नवीन अनुप्रयोग किये जा सकते है उसके बारे में हमें जानकारी प्राप्त होती है। अनुसंधान में शोध विधि स्वंय की अपनी उपयोगिता है। शोध विधि अनुसंधान उद्देश्य प्राप्ति हेतु सर्वोत्तम साधन प्रदान करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *श्रीवास्तव प्रो. सी.बी. शर्मा, प्रसाद डॉ. माता ''शैक्षिक अनुसंधान की विधियां'' 2010 अपोलो प्रकाशन, जयपुर।*
2. *पाठक आर.पी., भारद्वाज. पाण्डेय अमिता ''शिक्षा में अनुसंधान एवं सांख्यिकी'' 2012 कनिष्क प्रब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।*
3. *ढोढियाल सच्चिदानन्द अरविंद/पाठक ए.बी. ''शैक्षिक अनुसंधान का विधि शास्त्र'' 2003। राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ, अकादमी, जयपुर।*
4. *सरीन एवं सरीन ''शैक्षिक अनुसंधान की विधियां'' 2009। विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का गुणात्मक शोध पत्र

अनीता शुक्ला
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
शिक्षा संकाय
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

सारांश

आधुनिक युग शोध का युग माना जाता है, जो शोधकर्त्ता शोध कर रहे हैं, या कर चुके है, वे यह भी कहते हैं कि अमुक पत्रिका में मेरे इतने शोध–प्रपत्र प्रकाशित हो चुके है। एक उत्तम प्रकार का तथा गुणात्मक शोधपत्र लिखना कठिन कार्य है, क्योंकि यह कार्य आलोचनात्मक, सृजनात्मक तथा चिन्तर स्तर का है। शोध–प्रपत्र लेखन में एक विशिष्ट प्रक्रिया या अनुसरण करना होता है, जिसमें समुचित क्रम को अपनाया जाता है।

एक उत्तम प्रकार की रूपरेखा शोध–प्रपत्र के प्रारूप को तैयार करने में सहायक होती है। प्रस्तुत शोध–प्रपत्र के लेखन में निम्न बिन्दुओं को सम्मिलित किया गया है –

(1) शीर्षक/समस्या (2) प्रस्तावना (3) अध्ययन के उद्देश्य (4) अध्ययन की परिकल्पना (5) शोध–साहित्य (6) अध्ययन प्रणाली संक्षेप में (7) परिणाम तथा निष्कर्ष (8) सीमायें (9) सुझाव (10) सन्दर्भ ग्रन्थ सूची आदि।

की वर्ड – लाभान्वित बच्चे, अलाभान्वित बच्चे, बौद्धिक योग्यता, सृजनात्मकता।

शीर्षक/समस्या

शोध का शीर्षक कभी भी दिशा निर्देशित नहीं होना चाहिए क्योंकि शोध का उद्देश्य किसी समस्या का निष्पक्ष हल ढूँढना है। शोध का शीर्षक तो केवल विषय का नाम अथवा उसके क्षेत्र को सूचित करता है। प्रश्न रूप में समस्या को प्रस्तुत किया जाता है तथा समस्या का विधिवत् कथन किया जाता है – जैसे क्या अलाभान्वित Disadvantaged Children) से लाभान्वित बच्चों (Advantaged Children) में सृजनात्मकता तथा बौद्धिक योग्यता अधिक पायी जाती है? मुख्य समस्या को थोड़ा विस्तार और उपसमस्याओं को थोड़ा संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है।

प्रस्तावना

प्रस्तावना में शोधकर्ता अपनी समस्या का परिचय देता है। इसमें समस्या की पृष्ठभूमि तथा तर्क आधार (Rational) को प्रस्तुत किया जाता है तथा समस्या से सम्बन्धित विभिन्न चरों (Variable) संरचना तथा संप्रत्यय (Concept) की व्याख्या प्रस्तुत करते है, जैसे – उपर्युक्त शोध समस्या ''क्या लाभान्वित तथा अलाभान्वित बच्चों की बौद्धिक तथा सर्जनात्म योग्यताओं में सार्थक अन्तर है? प्रस्तुत समस्या में चार सम्प्रत्यय है :– लाभान्वित बच्चे, अलाभान्वित बच्चे, बुद्धि तथा सृजनात्मकता।

अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के शोध उद्देश्य कौन–कौन से है संक्षेप में लेकिन स्पष्ट रूप से अध्ययन के उद्देश्यों को प्रस्तुत किया जाता है।

1. लाभान्वित तथा अलाभान्वित बच्चों की बौद्धिक योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. दोनों समूहों की सृजनात्मक योग्यता का अध्ययन करना।
3. बुद्धि तथा सृजनात्मकता के बीच सम्बन्ध स्थापित करना।
4. बुद्धि तथा सृजनात्मकता के विकास पर यौन (Sex) के प्रभाव का अध्ययन करना।
5. बुद्धि तथा सृजनात्मकता पर क्षेत्र (Region) के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनायें

परिकल्पना का अर्थ वह अनुमानित कथन है, जिसका निर्माण शोधकर्ता वास्तविक शोध के पहले ही करता है। इस अनुमानित कथन में शोध के परिणामों के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जाती है। वासतविक शोध के बाद जो परिणाम प्राप्त होते है, उनके आधार पर यह भविष्यवाणी सही भी हो सकती है और गलत भी। जैसे–ऊपर के उदाहरण के सन्दर्भ में लिखा जा सकता है कि अनुभाविक प्रमाणीकरण (Empirial Verification) के लिए कई परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया –

1. अलाभान्वित बच्चों में लाभान्वित बच्चों की अपेक्षा बौद्धिक योग्यता कम पायी जाती है।
2. लाभान्वित से अलाभान्वित बच्चों में सर्जनात्मक योग्यता कम पायी जाती है।
3. बुद्धि तथा सर्जनात्मकता के बीच धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया जाता है।
4. बुद्धि तथा सर्जनात्मकता पर यौन का सार्थक प्रभाव पाया जाता है।
5. ग्रामीणों की अपेक्षा शहरी प्रयोज्यों में बुद्धि तथा सर्जनात्मकता अधिक पायी जाती है।

शोध–साहित्य

शोध साहित्य या साहितयलोकन में पहले किए गए ऐसे शोधों का उल्लेख संक्षेप में किया जाता है जो प्रस्तुत शोध अध्ययन से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होते है। सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन में प्रस्तुत शोध समस्या के तर्क आधार (Rational) की व्याख्या करने में सुविधा होती है साथ ही परिणामों की व्याख्या करने तथा परिकल्पनाओं की स्वीकृति (acceptance) या अस्वीकृति (rejection) के औचित्य (Justification) को प्रमाणित करने में सहायता मिलती है। जैसे उर्पयुक्त उदाहरण को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि पाश्चात्य संस्तुति (Western Culture) तथा भारतीय संस्कृति (Indian Culture) में लाभान्वित बच्चों तथा अलाभान्वित बच्चों की बुद्धि, सर्जनात्मकता, सम्प्रत्यय शिक्षण अमूर्ति विवेक (abstyract reasoning) आदि से सम्बन्धित पहले किए गए अध्ययनों का

उल्लेख संक्षेप में किया जा सकता है तथा उनके आधार पर प्राप्त परिणामों के आलोक से प्रस्तुत अध्ययन में परिणामों की व्याख्या की गयी तथा परिकल्पनाओं की स्वीकृति या अस्वीकृति को प्रमाणित किया गया।

शोध विधियाँ :–

शोध विधियों या अध्ययन प्रणाली के अन्तर्गत तीन बातों का उललेख किया जा सकता है :–

(1) प्रतिदर्श तथा प्रतिचयन (2) शोध उपकरण (3) साँख्यिकी विधियाँ

शोध विधियाँ

शोध अध्ययन में उन सांख्यिकीय विधियों का उल्लेख किया जाता है, जिनका उपयोग प्राप्त ऑकड़ों (data) के विश्लेषण (Analysis) तथा निरूपण (treatment) के लिए किया गया। साथ ही भिन्न–भिन्न प्राचल (Parametric Method) अप्राचल विधियों (Non Parametic Method) का प्रयोग कियागया। जैसे – उपर्युक्त उदाहरण के विषय में लिखा जा सकता है कि प्राप्तांको के विश्लेषण तथा निरूपण के लिए टी–परीक्षण (t-test) तथा फाई वर्ग (X^2) का उपयोग किया गया। क्योंकि ये तीनों परीक्षण उपयोगी व अनुकूल पाये गये।

बालिका एवं चित्रों का उपयोग

प्राप्तांकों/ऑकड़ों के विश्लेषण के पश्चात् जो परिणाम प्राप्त होते है, उन्हें तालिका (Table) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्येक स्वतन्त्र चार के परिणामों को अलग–अलग तालिका में प्रस्तुत किया जाता है। जैसे – ऊपर के उदाहरण में लाभान्वित अलाभान्वित, क्षेत्र तथा यौन स्वतन्त्र चर है। बृद्धि और सर्जनात्मकता दो आश्रित चर है। अतः बुद्धि तथा सर्जनात्मकता से सम्बन्धित तीनों स्वतन्त्र चरों के परिणामों को अलग–अलग तालिका से स्पष्ट किया गया।

परिणामों की व्याख्या

परिणामों की व्याख्या तथा विवेचना पहले किए गए शोधों से प्राप्त परिणामों के आधार पर की जाती है और प्रमाणित किया जाता है कि कौन–कौन सी परिकल्पनायें स्वीकृत हुई और कौन–कौन सी परिकल्पनायें अस्वीकृत हुई। जैसे– उपर्युक्त उदाहरण में लाभान्वित बच्चों तथा अलाभान्वित बच्चों की बुद्धि तथा सर्जनात्मक से सम्बन्धित परिणामों की व्याख्या पहले किये गये शोधों के परिणामें के आधार पर की जायेगी। यदि पहले से अध्ययन उपलब्ध न हो तो निरीक्षणों तथा अनुभावों के आधार पर व्याख्या करी जायेगी। उदाहरण में लिए मान लें कि प्रस्तुत उदाहरण की पहले चार परिकल्पनायें स्वीकृत हो गयी और अन्तिम (पॉचवी) परिकल्पना अस्वीकृत हो गई। ऐसी स्थिति में परिकल्पनाओं की स्वीकृति तथा अस्वीकृति के (Jurisdiction) औचित्य का उल्लेख करना होगा।

निष्कर्ष

परिणामों की व्याख्या के बाद जो निष्कर्ष प्राप्त होते है, उनका भी उल्लेख करना होता है। जैसे – उपर्युक्त उदाहरण से सम्बन्धित निष्कर्षों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है :–

(1) बौद्धिक योग्यता के दृष्टिकोण से अलाभान्वित बच्चों की तुलना में लाभान्वित बच्चे श्रेष्ठ होते है। (2) सर्जनात्मकता योग्यता की दृष्टि से भी अलाभान्वित बच्चों की तुलना में लाभान्वित बच्चे श्रेष्ठ होते है। (3) बुद्धि तथा सर्जनात्मक के मध्य धनात्मक सह–सम्बन्ध होता है। (4) स्त्री तथा पुरुष की बुद्धि तथा सर्जनात्मकता के बीच कोई सार्थक अन्तर पाया गया। (5) ग्रामीणों तथा शहरी लोगों में बौद्धिक योग्यता तथा सर्जनात्मकता योग्यता में दृष्टिकोण से कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

सीमायें/त्रुटियाँ

प्रस्तुत शोध की कौन–कौन सी सीमायें है इससे अध्ययन की वैधता तथा विश्वसनीयता में सम्बन्ध में निर्णय करने में सुविधा मिलत है तथा आगे शोध करने वालों को उन त्रुटियों से बचने का अवसर मिलता है।

सार्थकता तथा सुझाव

शोध कुछ त्रुटियों के बावजूद जो सार्थकता होती है, उसका वर्णन किया जाता है क्योंकि उसके आशयों (implications) के आधार पर आगे शोध में लिए सुझाव किये जाते है। जैसे – उपर्युक्त उदाहरण के लिए कहा जा सकता है कि कुछ सीमाओं के बावजूद यह शोध अलाभान्वित व बच्चों के समुचित विकास के लिए सार्थक आशय रखता है तथा अन्य पक्षों से सम्बन्धित शोध की प्रेरणा मिलती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शोध के प्रारूप एवं शैली सम्बन्धी कई विधियाँ इस समय प्रचलन में है। दो विधियाँ प्रयोग में अधिक है – एम0एल0ए0 (मार्डन लैंग्वेज एशोसिएशन) फार्मेटिंग एण्ड स्टाइल गाइड तथा ए0पी0ए0 (अमेरिकन साइकोलाजिक एसोसिएशन) फार्मेटिंग एण्ड स्टाइल गाइड। इन दोनों स्टाइल से शोधार्थी जिसे चहो या जो सुविधाजनक लगे, उसका अनुसरण कर सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची प्रस्तुत करने की एम0एल0आर0 शैली

कुल नाम आदि नाम, कृति शीर्ष, प्रकाशन स्थल, प्रकाशन प्रकाशन वर्ष माध्यम।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *सुलेमान, मुहम्मद (2005) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, जनरल बुक एजेन्सी, पटना, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ संख्या–495, 498*
2. *शर्मा, आर0ए0 (2016) शिक्ष अनुसंधान में मूल तथा एवं शोध प्रक्रिया, आर लाल बुक डिपो, मेरठ पृष्ठ संख्या–536*
3. *सिंह, अरुण कुमार (2014) ग्यारहवाँ संस्करण, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोती लाल बनारसी दास, जवाहर नगर, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या–31, 32*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध विधियां एवं शोध प्रारूप

प्रिया तिवारी
प्रवक्ता
समाजशास्त्र विभाग
हे0नं0ब0राज0स्ना0महाविद्यालय
नैनी, इलाहाबाद

सारांश

वर्तमान समय में शोधपत्र लेखन बड़ी तीव्र गति से हो रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जब से एकेडमिक परफार्मेन्स इन्डीकेटर लाया गया है तब से शोधपत्र लेखन की बाढ़ सी आ गयी है। इन शोधपत्रों का कई स्तर होता है। कुछ तो मौलिक, उच्च कोटि के एवं सारगर्भित होते हैं वही कुछ शोधार्थी एवं शिक्षक इस ए.पी.आई. को बढ़ाने के लिये एवं अपने लेखों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से अन्य दूसरे लेखकों की किताबों से एवं इंटरनेट स`लेखन सामग्री लेकर अपने लेख प्रकाशित करवाते हैं। इस प्रकार के लेखों में न ही गुणवत्ता रहती है और न ही मौलिकता। हमको यदि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का गुणवत्ता युक्त शोधपत्र लिखना है तो हमें सबसे पहले विषय का व्यापक अध्ययन करना होगा। विभिन्न काल, स्थान, परिस्थिति कें संदर्भ में उस विषय का प्रभाव देखना होगा। विषय का चुनाव पक्षपात रहित होकर करना चाहिए। विषय के अनुरूप शोध प्रारूप का निर्माण, उपयुक्त शोध पद्धति एवं तथ्य संकलन की तकनीक का चुनाव कर लेना चाहिए। प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण द्वारा निष्कर्ष प्राप्त कर उपकल्पना की सत्यता की जांच कर लेना चाहिए। इस प्रारूप द्वारा जो शोधपत्र प्रस्तुत होगा वास्तव में वह मानकों पर खरा शोधपत्र होगा।

प्रस्तावना

सामाजिक मूल्य, परम्पराएं, जनरीति, विश्वास आदि अमूर्त तथ्यों के लिये गुणात्मक पद्धतियों का प्रयोग करते हैं। इन गुणात्मक पद्धतियों में हम आगमन एवं निगमन पद्धति, वैधानिक जीवन अध्ययन पद्धति, सभा समिति तथा सामुदायिक अध्ययन पद्धति को शामिल कर सकते हैं।

वहीं दूसरी ओर कुछ घटनाएं जिनका निश्चित परिणाम हमको प्राप्त करना रहता है उन घटनाओं के अध्ययन हमको प्राप्त करना रहता है उन घटनाओं के अध्ययन के लिये सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति, सांख्यिकी पद्धति, तुलनात्मक पद्धति को प्रयोग में लाते हैं।

इसी क्रम में आंकड़े एकत्रित करने के लिये जो तकनीक होती है उसका चुनाव भी सावधानी पूर्वक करना होता है। यदि विषय ऐसा है जिसका गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन करना है तो हम अनुसूची का प्रयोग करते हैं। यदि विषय का क्षेत्र काफी विस्तृत है, उत्तरदाता शिक्षित है और हमें कम समय में अध्ययन करना है तो हम प्रश्नावली का प्रयोग करते हैं। नृजाति अध्ययन में, जेल में, अस्पताल आदि स्थानों पर अवलोकन प्रणाली प्रयोग की जाती है। जिस विषय के बारे में थोड़ा भी पता नहीं है ऐसी स्थिति में जानकारी एकत्र करने के लिए साक्षात्कार प्रणाली अपनायी जाती है।

जनमत जानने के लिये अन्तर्वस्तु विश्लेषण तथा ऐतिहासिक व्यक्ति या घटना के अध्ययन के लिये वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को अपतने हैं।

अतः सही तकनीक के द्वारा हम पर्याप्त और सटीक आंकड़े प्राप्त करते हैं अर्थात पद्धतियों की सफलता तकनीक के चुनाव पर निर्भर करती है।

पुराने समय से ही प्रकृतिक विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान में यह विवाद का विषय रहा है कि सामाजिक विज्ञान को विज्ञान मानना कहां तक उचित है? कार्ल पियर्सन भी कहते हैं कि विज्ञान एक निश्चित कार्य पद्धति के कारण विज्ञान है अर्थात् जो भी सामाजिक विषय एक निश्चित पद्धति को लेकर आगे बढ़ेगा वह सामाजिक विज्ञान कहलायेगा। यद्यपि सामाजिक विज्ञान के अध्ययन क्षेत्र में सामाजिक सम्बन्ध आते हैं जिनका व्यवहार परिवर्तित होता रहता है अतः ऐसी स्थिति में हमें सामाजिक विज्ञानों के लिये कुछ निश्चित विधियों की आवश्यकता पड़ती है जैसे समाजमिति तथा बोगार्ड्स के सामाजिक दूरी के पैमाने।

अब हम इस शोधपत्र में शोध प्रारूप के बारे में जानेंगे। किसी भी अनुसंधान को शुरू करने से पहले जो खाका तैयार करते है उसे ही हम अनुसंधान प्रारूप कहते हैं। शोध प्रारूप में शोध की समस्या उपकरण, पद्धति, तथ्य संग्रहण की तकनीक, निदर्शन आदि सभी निश्चित कर लिया जाता है और उस रोड मैप पर चलकर हम आसानी से शोध पूर्ण कर लेते हैं।

इस शोधपत्र में हम अपने को सामाजिक शोध प्रारूप तक ही सीमित रखेंगे। शोध प्रारूप दो तरह के होते हैं– (क) आदर्श शोध प्रारूप (ख) व्यवहारिक शोध प्रारूप आदर्श शोध प्रारूप में हम पहले ही प्रारूप का निर्माण करते हैं और व्यवहारिक शोध प्रारूप भी कई प्रकार के होते हैं–

प्रयोगात्मक शोध प्रारूप : जब विषय पर वाह्य चर द्वारा प्रभाव का अध्ययन करना रहता है तो हम प्रयोगात्मक शोध प्रारूप का सहारा लेते हैं। इस शोध प्रारूप द्वारा उपकल्पना की जांच होती है एवं चारों के बीच कार्य–करण सम्बन्धों का भी

पता लग जाता है। इस शोध प्रारूप में दो चरों (जिसमें एक नियंत्रित चर होता है और दूसरा परिवर्तित) के बीच सम्बन्धों को देखा जाता है।

शोध प्रारूप का दूसरा प्रकार अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप है जब हम कोई ऐसा विषय चुनते हैं जिसके बारे में हमको ज्यादा नहीं पता रहता तो ऐसी स्थिति में अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप का सहारा लिया जाता है। इस प्रारूप में अनुसंधानकर्ता घटनाओं से सम्बन्धित मुख्य तथ्य, व्यक्तियों, साहित्य, परिस्थिति आदि का गहन विश्लेषण करके अनुसंधान प्रारूप का निर्माण करता है। इसमें उपकल्पना का निर्माण बाद में किया जाता है।

शोध प्रारूप का तीसरा प्रकार वर्णनात्मक शोध प्रारूप है। इस शोध प्रारूप में शोध के चरणों का सही क्रम सम्भव हो पाता है। समस्या का चुनाव, अध्ययन का उद्देश्य, उपकल्पना का निर्माण, निदर्शन का चुनाव, तथ्य संकलन प्रविधि, वर्गीकरण एवं विश्लेषण तद्पश्चात निष्कर्ष आदि इस प्रारूप के विभिन्न चरणों में आता है।

शोध प्रारूप में ही घटनाओं के अध्ययन के लिये कुछ पद्धतियों का भी प्रयोग करते हैं। जिनको गुणात्मक एवं परिणात्मक पद्धतियों में बांटते हैं।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुसंधान प्रारूप किसी भी अनुसंधान की रीढ़ होती है। रीढ़ जितनी मजबूत अनुसंधान उतना ही मौलिक एवं सृजनात्मक होता है। प्रस्तावना में हम लोगों ने देखा कि किस तरह अनुसंधान के विषय के आधार पर प्रारूप बनाना पड़ता है। अगर विषय एकदम नया है जिसके बारे में जानना है तो अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप का निर्माण करना रहता है जिसमें प्रायप के चरणों में उपकल्पना का स्थान बाद में रहता है। उसी तरह यदि विषय की वर्णनात्मक व्याख्या करनी है तो अनुसंधान प्रारूप वर्णनात्मक प्रकृति का होगा। जिसमें अनुसंधान के चरणों का प्रारम्भिक स्तर से अन्तिम स्तर तक की रूपरेखा बनानी पड़ती है। इसी तरह प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप कार्य–करण सम्बन्धों तथा उपकल्पना की वैधता का परीक्षण करता है। किन्हीं परिस्थितियों का अलग–अलग चरों तथा विभिन्न समय पर किसका कितना प्रभाव पड़ा इसका अध्ययन हम प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप में करते हैं।

इसी तरह इन अनुसंधान प्रारूपों में हम जिन पद्धतियों का सहारा लेते हैं इसका विश्लेषण भी हम करेंगे।

आगमन एवं निगमन पद्धति के द्वारा हम अनुसंधान कार्य बड़े सरल ढंग से कर लेते हैं। निगमनात्मक विधि में किसी सामान्य सिद्धांत के आधार पर कोई विशेष सिद्धांत का निर्माण किया जाता है और आगमनात्मक विधि में कई उदाहरण देकर एक सामान्य नियम निकाला जाता हैं। अनुसंधान कार्य में यह दोनों ही पद्धतियों अत्यन्त उपयोगी है। समाजमिति तकनीक में सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इसके द्वारा उपेक्षित वर्ग की समस्याओं का पता लगाया जाता है।

गुणात्मक पक्ष को मापने के लिए ही बोगार्डस ने सामाजिक दूरी का पैमाना दिया। इसमें गुणात्मक पक्षों को निश्चित क्रम देकर और संकेतको के आधार पर वर्गीकरण करके अध्ययन को आसान बनाया जाता है।

इस तरह गुणात्मक पद्धतियां अनुसंधान प्रक्रिया को आसान बनाने में कई तरह से सहायता करती है। परिणात्मक पद्धति में सर्वेक्षण पद्धति व अनुसंधान व सांख्यिकी पद्धति का सहारा लिया जाता है। सर्वेक्षण पद्धति जहां छोटे क्षेत्र एवं अल्पकालीन परिवर्तनों को त्वरित अध्ययन करता है वहीं अनुसंधान में गहन व दीर्घकालीन अध्ययन होता है। तुलनात्मक पद्धति द्वारा भी चरों का पारस्परिक प्रभाव तथा कार्यकरण सम्बन्धों का पता लगाया जाता है। तुलनात्मक पद्धति में दो तरह से अध्ययन किया जाता है एक अध्ययन जहां विशेष समयान्तरण पर होता है कि इस अंतराल में क्या अंतर आया ओर दूसरा एक ही क्षेत्र में विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों के संयुक्त शोध में अलग–अलग परिपेक्ष्य को सामने रखकर किया जाता है।

वास्तव में पद्धति कोई भी हो निष्कर्ष सत्य ज्ञात करना होता है। वास्तव में सामाजिक विज्ञानों में यह 'पद्धति' ही है जो समाज विज्ञान को प्राकृतिक विज्ञान की श्रेणी में लाती है और इस पद्धति का प्रयोग कैसे और किस समय करना है इसका पता हमें प्रारूप से ही चलता है अतः अनुसंधान प्रारूप वह रूपरेखा है जो किसी अनुसंधान को ठीक ढंग से करवाकर विचलन की स्थिति आने से रोकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अरूण कुमार : समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, दिल्ली (2007)
2. राय, नरेन्द्र : अनुसंधान परिचय, लायल बुक डिपो, नई दिल्ली (2004)
3. कौल, लोकेश : शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस (2006)
4. गुप्ता, एस0पी0 : आधुनिक मापन और मूल्यांकन (2010)
5. पाण्डेय, एस0एस0 : अनुसंधान पद्धतियां एवं विश्लेषण (2007)

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध विधि

मोनिका श्रीवास्तव
प्रवक्ता
शिक्षा शास्त्र विभाग
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

सारांश

आधुनिक युग में विज्ञान की प्रगति के साथ हमारे जीवन में अनुसंधान का विशेष महत्व है क्योंकि अनुसंधान का प्रयोग अब ज्ञान की प्रत्येक शाखा के गहन अध्ययन के लिए होने लगा है। शोध शब्द से एक प्रकार की शुद्धि या संशोधन की बोध होता है। अनुसंधान द्वारा उन मौलिक प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया जाता है जिनका उत्तर अभी तक उपलब्ध नहीं हो सका है।

प्रस्तावना

किसी भी ज्ञान की शाखा में नवीन तथ्यों की खोज के लिए सावधानीपूर्वक किए गए अन्वेषण को शोध की संज्ञा दी जाती है। जिस प्रकार एक व्यापारी को यह जानने की आवश्यकता होती है कि उसके अनुमान के विपरीत मूल्य क्यों गिर रहे हैं, एक पिता को यह जानने की आवश्यकता होती है कि उसका योग्य पुत्र परीक्षा में कम अंक क्यों प्राप्त करता है, उसी प्रकार किसी भी शोध को उपयुक्त विधि से करने की आवश्यकता होती है। अनुसंधान प्रक्रिया में शोध विधियां महत्वपूर्ण होती है। अनुसंधान समस्या के निराकरण के लिए अपनाए जाने वाले विभिन्न चरणों का वह विधियाँ वर्णन देती हैं।

किसी अनुसंधान समस्या के अध्ययन में उपयुक्त विधि का चयन और उसमें विशिष्ट अभिकल्प समस्या से जुड़े आंकडों की प्रकृति पर निर्भर करता है। चयनित विधि वैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुरूप और विश्वसनीय व्यापीकरण मान्यताएं प्रदान करने में सक्षम होनी चाहिए। शोधकर्त्ता को सभी शोध विधियों का विशेषकर उनकी शक्ति, सीमाओं, अनुप्रयोगिता व उपयुक्तता के संबंध में संपूर्ण ज्ञान होना चाहिए। इससे उसे शोध प्रक्रिया में उठाए जाने वाले चरणों के नियोजन में सहायता मिलेगी और समस्या के समाधान के लिए वास्तविक कार्य आरंभ करने से पहले वह विधि का वर्णन कर सकेगा।

प्रयोग की जा रही विशिष्ट विधि का विस्तृत वर्णन यह ज्ञात करने का अच्छा तरीका है कि क्या चयनित विधि ठीक प्रकार प्रयोग की गई है और प्रभावी सिद्ध होगी। यदि शोधार्थी चयनित विधि का विवरण नहीं दे सकता तो संतोषजनक परिणाम प्राप्त होने की संभावना कम रहती है। पूर्व नियोजित व सुवर्णित विधि शोधकर्त्ता को अध्ययन में आने वाली समस्या के समाधान के लिए वैज्ञानिक व सुसंगत योजना प्रदान करती है।

नवीन ज्ञान अर्जन के लिए प्रणालीबद्ध प्रयास ही शोध है अर्थात् अनुसंधान वह बौद्धिक प्रक्रिया है जो नवीन ज्ञान उत्पन्न करती है या पूर्वगामी त्रुटियों या अशुद्ध धारणाओं का शोधन करती है और व्यवस्थित ढ़ंग से वर्तमान ज्ञानकोश में वृद्धि करती है। किसी समस्या के उचित समाधान के लिए क्रमबद्ध तथा शुद्ध चिंतन एवं विशिष्ट उपकरणों के प्रयोग की विधि ही शोध विधि है।

जब शोधकर्त्ता उपयुक्त डिजाइन का चयन कर लेता है तो वह एक वैज्ञानिक विधि अपनाता है जिसमें उन सभी चरणों की व्याख्या होती है जिनसे होकर शोध की समस्या का समाधान करने का प्रयास किया जाता है। किसी भी ज्ञान की शाखा में नवीन तथ्यों की खोज के लिए सावधानीपूर्वक किए गए अन्वेषण या जॉच–पड़ताल को शोध की संज्ञा दी जाती है।

शोध विधि में तीन चरण होते हैं :–

1. प्रयोज्य
2. उपकरण व अन्य वस्तुएं
3. क्रियाविधि

प्रयोज्य वाले अनुच्छेद में शोधकर्त्ता इस बात का उल्लेख करता है कि शोध में कितने प्रयोज्य थे, उनका चयन यादृच्छिक रूप से किया गया है या स्वेच्छाचारी ढ़ंग से। इसमें शोधकर्त्ता प्रयोज्य, जो उनके अध्ययन में भाग ले रहे हैं, की उम्र, बुद्धिलब्धि तथा अन्य संगत सूचनाओं की सूची तैयार करता है।

उपकरण के अन्तर्गत उन सभी उपकरणों या प्रश्नावली का वर्णन होता है, जिनका उपयोग शोध में किया जाता है। कभी–कभी जब किसी जटिल मशीनरी या उपकरण का उपयोग भी होता है तो उसका चित्र भी बना दिया जाता है। इस अनुच्छेद में शोधकर्त्ता उन उपकरणों जैसे स्टॉप वॉच, स्मृति पटल, स्पर्शानुभावक तथा अन्य वस्तुएं जैसे कोई मनोवैज्ञानिक परीक्षण, पर्दा, स्केल आदि प्रदर्शित करता है।

शोधविधि का सबसे प्रमुख चरण क्रियाविधि होती है। इस भाग में शोधकर्त्ता उन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन करता है जिनसे होकर शोध किए गए हैं। जैसे :– शोधकर्त्ता यह प्रदर्शित करता है कि किस प्रकार से प्रयोज्यों को विभिन्न समूहों में बॉटा गया, किस समूह को कौन सा कार्य दिया गया, प्रयोज्यों को क्या निर्देश दिए गए आदि। क्रियाविधि अनुच्छेद में मूल रूप से तीन बातों पर बल दिया जाता है–

1. शोध में किस प्रकार के डिजाइन का प्रयोग किया गया है।
2. यदि मानव को प्रयोज्य के रूप में प्रयोग किया गया है तो उन्हें किस तरह निर्देश दिया गया है।
3. प्रयोज्यों के व्यवहारों का किस प्रकार मापन किया गया है।

कभी–कभी शोध में एक जटिल डिजाइन का प्रयोग किया जाता है। अवलोकित सामग्री का संभावित वर्गीकरण, साधारणीकरण एवं सत्यापन करते हुए कर्म विषयक और व्यवस्थित पद्धति शोध है।

अधिकांश मनोवैज्ञानिक ने शोध विधियों को तीन भागों में विभाजित किया है–

1. ऐतिहासिक विधि
2. वर्णनात्मक विधि / विवरणात्मक विधि
3. प्रयोगात्मक विधि

ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं, विकासों और अनुभवों की समालोचनात्मक जाँच है, जो सावधानीपूर्वक तथा वैधता के साथ प्रमाणों को महत्व देती हुई समुचित साक्ष्यों पर आधारित होती है। अन्य शोधकर्त्ताओं के समान ही आधुनिक शोधकर्त्ता भी प्रदत्त संकलित करता है, प्रदत्तों की वैधता हेतु उनकी जाँच करता है तथा प्रदत्तों की विवेचना करता है।ऐतिहासिक अनुसंधानों के साक्ष्य पुस्तकालयों, संग्रहालयों, प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों, विशिष्ट व्यक्तियों तथा पुरातत्त्वीय उत्खनन कार्यों से प्राप्त होते हैं। ऐतिहासिक अनुसंधानों का मुख्य उद्देश्य अतीत के वैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर वर्तमान को समझना, वर्तमान की समस्याओं का समाधान निकालना तथा भविष्य के लिए पूर्वकथन करना है। ऐतिहासिक शोध मूलतः 'क्या था' का वर्णन करता है।

वर्णनात्मक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिसमें वर्तमान हालातों को रिकार्ड किया जाता है, विश्लेषण किया जाता है तथा उसकी व्याख्या की जाती है। इसे अप्रयोगात्मक शोध / सहसंबंधात्मक शोध भी कहते हैं। वर्णनात्मक शोध का संबंध वर्तमान से होता है। वह वर्तमान के तत्त्वों, परिस्थितियों के संबंध में व्यक्तियों, वस्तुओं, घटनाओं आदि के विषय में प्रदत्त एकत्रित कर उनका विश्लेषण तथा विवेचन, वर्गीकरण तथा मापन आदि का कार्य करती है। वर्णनात्मक शोध मूलतः 'क्या है' का वर्णन करता है।

वर्णनात्मक अनुसंधान अध्ययनों की अभिकल्पना, परिघटनाओं की विद्यमान स्थिति के संबंध में, संबंधित परिशुद्ध सूचना प्राप्त करने के लिए और जब भी संभव हो, खोजे हुए तथ्यों से वैध निष्कर्ष निकालने के लिए की जाती है। वर्णनात्मक अध्ययन केवल आंकड़ों का संग्रहण ही नहीं बल्कि आंकड़ों का मापन, वर्गीकरण, विश्लेषण, तुलना तथा व्याख्या भी है। वर्णनात्मक शोध का मुख्य उद्देश्य वर्तमान परिस्थितियों तथा स्थितियों का अध्ययन करना व भविष्य के लिए नियोजन करना है। वर्णनात्मक शोध के अन्तर्गत सर्वेक्षण अध्ययन, अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन तथा विकासात्मक अध्ययन आते हैं।

प्रयोगात्मक शोध वह शैक्षिक शोध है जिसमें शोधकर्त्ता उन शैक्षिक घटकों को नियंत्रित करता है, जिनमें जाँच की अवधि में बच्चा या बच्चों का समूह प्रभावित किया जाता है तथा उसके परिणामस्वरूप प्राप्त निष्पत्ति का अवलोकन किया जाता है। प्रयोगात्मक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिसमें कुछ चरों को नियंत्रित किया जाता है, कुछ चरों को परिचालित किया जाता है एवं दूसरे चर पर उसके पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। ऐसे शोध में मूलतः ' चरों को नियंत्रित करने एवं उनका परिचालन करने का क्या प्रभाव होगा " इसका अध्ययन किया जाता है। प्रयोगात्मक शोध के अन्तर्गत प्रयोगशाला प्रयोगात्मक शोध तथा क्षेत्र प्रयोगात्मक शोध आते हैं। प्रयोगात्मक शोध के चार आवश्यक अभिलक्षण होते हैं–

1. नियन्त्रण
2. हेर – फेर
3. प्रेक्षण
4. पुनरावृत्ति

किसी विशिष्ट अध्ययन में यद्यपि सामान्यतः उपरोक्त विधियों में से कोई एक ही विधि प्रयुक्त की जाती है तथापि यदि आवश्यक हो तो एक से अधिक विधि भी प्रयुक्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त शोध विधि को निम्न दो भागों में भी विभाजित किया गया है :–

1. गुणात्मक शोध
2. मात्रात्मक शोध

गुणात्मक शोध कई अलग शैक्षणिक विषयों में विनियोजित, पारंपरिक रूप से सामाजिक विज्ञान साथ ही बाजार अनुसंधान और अन्य संदर्भों में जाँच की एक विधि है। गुणात्मक शोधकर्त्ताओं का उद्देश्य मानवीय व्यवहार और ऐसे व्यवहार को शासित करने वाले कारणों को गहराई से समझना है। गुणात्मक विधि न केवल क्या, कहाँ, कब की छानबीन करती है, बल्कि क्यों और कैसे को खोजती है। गुणात्मक अनुसंधान में आगमनात्मक उपागम का प्रयोग होता है। इसमें शोधकर्त्ता की अहम् भूमिका होती है। गुणात्मक शोध का केन्द्र बिन्दु विशिष्ट परिस्थिति, संस्थायें, समुदाय या मानव समूह होता है।

गुणात्मक शोध में चरों का उनके गुणों के आधार पर विश्लेषण किया जाता है। समझने योग्य सिद्धान्तों की स्थापना करने, शोधार्थियों के साथ सहयोगात्मक शोधों में संलग्नता तथा किसी उत्पाद या किसी कार्यक्रम की उपयोगिता को सामान्य रूप से आंकलित करने के स्थान पर वर्तमान के अभ्यास या प्रयासों को सुधारने की ओर अग्रसर संरचनात्मक मूल्यांकन के संचालन में गुणात्मक शोध का अत्यन्त महत्व है। गुणात्मक शोध विधियां केवल विशिष्ट अध्ययन किए गए मामलों पर

जानकारी उत्पन्न करती हैं और इसके अतिरिक्त कोई भी सामान्य निष्कर्ष केवल परिकल्पनाएं हैं। इस प्रकार की परिकल्पनाओं में सटीकता के सत्यापन के लिए मात्रात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है।

मात्रात्मक शोध में चरों की संख्या या मात्रा के आधार पर विश्लेषण किया जाता है। यह शोध आदेशात्मक होता है। इसमें अभिकल्प प्रारूप शोध के पूर्व ही निर्धारित हो जाता है तथा इसमें सिद्धान्त भी पूर्व निर्धारित रहते हैं। मात्रात्मक शोध निगमन पद्धति पर आधारित होता है। आँकड़ों के आधार पर नए आँकड़ों को निकालना ही मात्रात्मक शोध का उद्देश्य होता है।

ऐतिहासिक अनुसंधान का शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र में अत्यधिक महत्व है क्योंकि वर्तमान व भविष्य की दिशाओं का संदर्श प्राप्त करने के लिए भूतकाल की शिक्षा, उपलब्धियों और प्रवृत्तियों को जानना आवश्यक है।

वर्णनात्मक शोध विधि शैक्षिक परिघटनाओं की विद्यमान स्थितियों या संबंधों के रूप में, विद्यार्थियों, शिक्षकों, माता–पिताओं व विशेषज्ञों के अभिमत के रूप में, चालू प्रक्रियाओं, प्रत्यक्ष प्रभावों व विकासशील प्रवृत्तियों के रूप में व्याख्या में सहायक होती है।

शिक्षा पद्धति में विवादों के निपटारों का एकमात्र माध्यम प्रयोग है, शिक्षा सुधारों के सत्यापन का एकमात्र उपाय और संचयी परिपाटी स्थापित करने का अकेला मार्ग जिसमें पुरानी विद्वत्ता का अधोवर्ती कौतुक के पक्ष में सनक के कारण नियोजन , के भय के बिना, सुधार लागू किए जा सकते हैं।

प्रयोगात्मक शोध का प्रयोग उन दशाओं में सफलतापूर्वक किया जाता है, जहाँ पर कुछ सीमा तक महत्त्वपूर्ण घटकों या दशाओं को नियंत्रित किया जा सकता है।

निष्कर्ष

शोध हमारी आर्थिक प्रणाली में लगभग सभी सरकारी नीतियों के लिए आधार प्रदान करता है तथा इसके माध्यम से हम वैकल्पिक नीतियों का चिंतन तथा साथ ही इन विकल्पों में से प्रत्येक के परिणामों की जाँच कर सकते हैं। शोध मानव ज्ञान को दिशा प्रदान करता है तथा विविध विषयों में गहन व सूक्ष्म ज्ञान प्रदान करता है। यह ज्ञान के भण्डार को विकसित तथा परिमार्जित करता है। यह पूर्वाग्रहों के निदान व निवारण में सहायक है। नवीन ज्ञान की प्राप्ति के व्यवस्थित प्रयत्न को शोध कहते हैं। वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में उच्च शिक्षा की सहज उपलब्धता और उच्च शिक्षा संस्थानों को शोध से अनिवार्य रूप से जोड़ने की नीति ने शोध की महत्ता में वृद्धि कर दी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, सिंह, अरूण कुमार, मोतीलाल बनारसीदास*
2. *शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र, ढौंडियाल, सच्चिदानन्द,*
3. *फाटक, अरविन्द, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर*
4. *शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ, सरीन एवं सरीन, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2*
5. *शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, सिंह, डा0 रामपाल, शर्मा, डा0 ओ0पी0, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2*
6. *शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, कौल, लोकेश, विकास पब्लिशिंग हाऊस, प्रा0 लि0*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

महत्व एवं अध्ययन के दायरे

तनवीर हबीबा
सहायक अध्यापक
बीएड विभाग
शिववती शिवनंदन शुक्ला महाविद्यालय
कानपुर देहात

सारांश

विश्व की सारी प्रगति विभिन्न क्षेत्रों में किये गये अनुसंधानों के कारण ही है। आज प्रत्येंक क्षेत्र में इस बात का अनुभव किया जा रहा है कि यदि ज्ञान के विस्फोट को समझना है, प्रगति की होड़ में आगे बढ़ना है तो उसका एक मात्र साधन वैज्ञानिक अनुसंधान ही हो सकता है शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान का महत्वपूर्ण स्थान हैं। भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ आर्थिक सामाजिक ढ़ाँचा तीव्र गति से परिवर्तित हो रहा है वहाँ शिक्षा को तत्कालिक दशाओं के अनुरूप बनाकर उसकी उपयोगिता को बढ़ाने के लिए शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता को आज अधिक अनुभव किया जा रहा है।

अनुसंधान ज्ञान के विकास में सहायक है इसके द्वारा ज्ञान कोश में वृद्धि होती है।

गुड तथा स्केट का कहना है कि "विज्ञान का कार्य वृद्धि का विकास करना है तथा अनुसंधान का कार्य विज्ञान का विकास करना है अतः यदि हम बुद्धिमता का विकास चाहते हैं तो अनुसंधान करना ही होगा। अनुसंधान उद्देश्य प्राप्ति हेतु सर्वोत्तम साधन प्रदान करता यह एक उद्देश्यपूर्ण क्रिया है इसकी समूची क्रिया उसी निश्चित उद्देश्य प्राप्ति की ओर अग्रसर रहती है इसके अन्तर्गत अनर्गल बातों को स्थान नहीं है। अनुसंधान मानव–जीवन को गति देने एवं दिश–परिवर्तन में अत्यन्त सहायक होता है।

अनुसंधान जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति के सरल उपाय देता है। तथा अनुसंधान सुधार में भी सहायक देता है। ये रूढ़िगत विचारों एवं व्यवहारों में सुधार का मार्ग प्रस्तुत करता है।

अध्यापक के लिए तो यह प्राण ही है। अनुसंधान उनकी सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक समस्याओं का समाधान कर प्रगति का पथ प्रशस्त करता है। अनुसंधान विभिन्न विज्ञानों की प्रगति की शक्ति शाली कुंजी हैं अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समाधान का एक प्रबल यन्त्र हैं।

'अध्यापन कला के गुणात्मक विकास के लिए शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की आवश्यकता अनुभव की जाती है। शिक्षण सामग्री को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए भी अनुसंधान आवश्यक है। अधिगम प्रक्रिया को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने तथा उससे संबंधित समस्याओं के समाधान के लिए अनुसंधान आवश्यक है। कक्षा नियंत्रण, छात्रों से व्यक्तिगत संपर्क, छात्रों के परिवेश की जानकारी, शिक्षण की विधियाँ अनुशासन, अन्य क्रियाओं में छात्रों की सहभागिता आदि समस्याओं के समाधान के लिए अनुसंधान की आवश्यकता है।'

'शैक्षक अनुसंधान के क्षेत्र में शिक्षा दर्शन, शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण, इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए नियोजन, व्यवस्थापन, संचालन, समायोजन, धन व्यवस्था, शिक्षण विधि, सीखना तथा उसे प्रभावित करने वाले तत्व, प्रशासन, पर्यवेक्षण मूल्यांकन आदि सभी आते हैं शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र अत्यंन्त जटिल, विकासशील एवं परिवर्तनीय है।'

शिक्षण की क्रियाओं एवं संसाधनो को दृष्टिगत रखकर शैक्षिक अनुसंधान के अन्तर्गत शिक्षण, अधिगम, तथा अनुदेशनात्मक संसाधनों की उपलब्धता एवं प्रयोग जैसे मुद्दों को शामिल किया जा हैं अनुदेशनात्मक संसाधन पुस्तकालय , प्रयोगशाला, विस्तार एवं अध्ययन केन्द्र, क्षत्य–दृश्य सहायक सामग्री तथा शैक्षिक तकनीकि नेटवर्क अपेक्षाकृत नए अनुक्षेत्र हैं जिनके उपयोग, प्रबन्धतन्त्र एवं प्रभावों के बारे में कम ही अध्ययन हुए हैं।

इसके अतिरिक्त बाह्य एवं आन्तिरिक परीक्षाओं की वैधता विक्षृसनीयता एवं विशुदृता कुछ ऐसे श्रेय है जिन पर और अनुसंधान किया जा सकता है।

प्रस्तावना

आधुनिक युग में विज्ञान की प्रगति के साथ हमारे जीवन में अनुसंधान का विशेष महत्व हैं क्योंकि अनुसंधान का प्रयोग अब ज्ञान की प्रत्येक शाखा के गहन अध्ययन के लिए होने लगा है। अनुसंधान द्वारा उन मौलिक प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया जाता है जिनका उत्तर अभी तक उपलब्ध नहीं हो सका है, किन्तु हर प्रश्न का उत्तर मनुष्य के प्रयासों पर निर्भर करता है जैसे– कुछ वर्ष पहले जब तक मनुष्य चन्द्रमा पर नहीं पहुँचा था वास्तव में उसे इस बात की जानकारी नही थी कि वास्तव में चन्द्रमा क्या है? यह एक समस्या थी जिसका कोई समाधान नही था। मनुष्य को चन्द्रमा के सम्बन्ध में मात्र अवधारणायें ही थी शुद्ध ज्ञान नही था परन्तु अपने प्रयास से वह चन्द्रमा पर पहुँचा अनुसंधान मानव को प्रगति की ओर ले जाने में एक आवश्यक तथा शक्तिशाली उपकरण सिद्ध हुआ है। क्रमबद्ध अनुसंधान के अभाव में आज की जो प्रगति हम देखते हैं, वह कभी भी सम्भव नही हो सकती थी।

हमारे सांस्कृतिक विकास का गुप्त सहस्य अनुसंधान में निहित है। अनुसंधान नये सत्यों की खोज द्वारा अज्ञानता के क्षेत्रों को समाप्त कर देता है और वे सत्य हमें कार्य की श्रेष्ठतर विधियाँ तथा उत्तम परिणाम प्रदान करते है।

अंग्रेजी भाषा मे रिसर्च (Research) शब्द का हिन्दी अनुवाद– ''अनुसंधान है'' हिन्दी के शब्द अनुसंधान का निर्माण भी 'अनु' तथा 'संन्धान' से मिलकर हुआ है अर्थात प्रनः नये सिरे से व्यवस्थित संधान (खोज,जांच, या परीक्षण) करना। इस तथ्य को हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि प्रदत्तों को विश्लेषण करना करना, उनके आधार पर निष्कर्ष निकालना तथा नये सिधान्तों की खोज करना ही अनुसंधान प्रक्रिया के आवश्यक तत्व है। अनुसंधान में किसी समस्या का वैज्ञानिक दंग से अन्वेषण सम्मिलित है इसमें नवीन ज्ञान की खोज या समस्याओं के समाधान हेतु वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया जाता है। वैज्ञानिक विधि सदैव क्रमबद्ध सोद्देश्य तथा सुनियोजित होती हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि अनुसंधान की समूची प्रक्रिया तार्किक है।

अनुसंधान के अनुप्रयोग से पूरी शिक्षा–प्रणाली में गुणात्मक तब्दीली लाने के साथ शैक्षिक प्रयासों में मितत्ययता, संसाधनों को सर्वाधिक उपयोग तथा कम से कम खर्च कर उद्देश्यों की संतुष्टि।

विश्व की सारी प्रगति विभिन्न क्षेत्रों में किये गये अनुसंधानों के कारण ही है। आज प्रत्येंक क्षेत्र में इस बात का अनुभव किया जा रहा है कि यदि ज्ञान के विस्फोट को समझना है, प्रगति की होड़ में आगे बढ़ना है तो उसका एक मात्र साधन वैज्ञानिक अनुसंधान ही हो सकता है शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान का महत्वपूर्ण स्थान हैं। भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ आर्निक सामाजिक ढ़ाँचा तीव्र गति से परिवर्तित हो रहा है वहाँ शिक्षा को तत्कालिक दशाओं के अनुरूप बनाकर उसकी उपयोगिता को बढाने के लिए शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता को आज अधिक अनुभव किया जा रहा है।

अनुसंधान ज्ञान के विकास में सहायक है इसके द्वारा ज्ञान कोश में वृद्धि होती है।

गुड तथा स्केट का कहना है कि "विज्ञान का कार्य ब ृद्धि का विकास करना है तथा अनुसंधान का कार्य विज्ञान का विकास करना है अतः यदि हम बुद्धिमता का विकास चाहते हैं तो अनुसंधान करना ही होगा। अनुसंधान उद्देश्य प्राप्ति हेतु सर्वोत्तम साधन प्रदान करता यह एक उद्देश्यपूर्ण क्रिया है इसकी समूची क्रिया उसी निश्चित उद्देश्य प्राप्ति की ओर अग्रसर रहती है इसके अन्तर्गत अनर्गल बातों को स्थान नहीं है। अनुसंधान मानव–जीवन को गति देने एवं दिश–परिवर्तन में अत्यन्त सहायक होता है। राष्ट्रीयता की भावनाा के विकास में शिक्षा को महत्वपूर्ण योगदान रहा है। किन्तु शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल यही तक सीमित नही है।'' कि हमारा देश अन्य सभी देशों से श्रेष्ठ है अपितु उनमें **''वसुधैव कुटुम्बकम''** के भाव भी विकसित करना है इसकी पूर्ति जागरूक प्रयास पर ही निर्भर है अनुसंधान के अन्तर्गत लोक–हितकारी भावनाओं का समन्वय होता है इसी कारण अनुसंधान से राष्ट्रीयता की भावना को भी आघात नही पहुँचता तथा अन्तराष्ट्रीयता की कोमल पुष्पलतिका भी पुष्पित होती रहती है।

अनुसंधान जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति के सरल उपाय देता है। तथा अनुसंधान सुधार में भी सहायक देता है। ये रर्नढ़गत विचारों एवं व्यवहारों में सुधार का मार्ग प्रस्तुत करता है। अनुसंधान सत्य–ज्ञान के खोज की पिपासा शान्त करता है अनुसंधान अनेक प्रशासनिक गुत्थियों को सुलझाकर स्वस्थ प्रशासनिक व्यवस्था के सफल संचालन में सहायक होता है अध्यापक के लिए तो यह प्राण ही है। अनुसंधान उनकी सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक समस्याओं का समाधान कर प्रगति का पथ प्रशस्त करता है। अनुसंधान विभिन्न विज्ञानों की प्रगति की शक्ति शाली कुंजी हैं अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समाधान का एक प्रबल यन्त्र हैं। हर देश एवं काल में आदर्श मानव की धारणा बदलती रहती हैं। आदर्श मानव के निर्माण के लिए देश एवं काल के अनुसार अनुसंधान द्वारा उत्तम प्रकार के दर्शन की रचना आवश्यक है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम पाठ्य–पुस्तक पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा शिक्षण विधि आदि के सम्बन्ध में अुनसंधान आवश्यक है।

'अध्यापन कला के गुणात्मक विकास के लिए शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की आवश्यकता अनुभव की जाती है। शिक्षण सामग्री को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए भी अनुसंधान आवश्यक है। अधिगम प्रक्रिया को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने तथा उससे संबंधित समस्याओं के समाधान के लिए अनुसंधान आवश्यक है। कक्षा नियंत्रण, छात्रों से व्यक्तिगत संपर्क, छात्रों के परिवेश की जानकारी, शिक्षण की विधियाँ अनुशासन, अन्य क्रियाओं में छात्रों की सहभागिता आदि समस्याओं के समाधान के लिए अनुसंधान की आवश्यकता है।'

'शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में शिक्षा दर्शन, शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण, इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए नियोजन, व्यवस्थापन, संचालन, समायोजन, धन व्यवस्था, शिक्षण विधि, सीखना तथा उसे प्रभावित करने वाले तत्व, प्रशासन, पर्यवेक्षण मूल्यांकन आदि सभी आते हैं शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र अत्यंन्त जटिल, विकासशील एवं परिवर्तनीय है।'

शिक्षण की क्रियाओं एवं संसाधनो को दृष्टिगत रखकर शैक्षिक अनुसंधान के अन्तर्गत शिक्षण, अधिगम, तथा अनुदेशनात्मक संसाधनों की उपलब्धता एवं प्रयोग जैसे मुद्दों को शामिल किया जा हैं अनुदेशनात्मक संसाधन पुस्तकालय , प्रयोगशाला, विस्तार एवं अध्ययन केन्द्र, क्षत्य–दृश्य सहायक सामग्री तथा शैक्षिक तकनीकि नेटवर्क अपेक्षाकृत नए अनुक्षेत्र हैं जिनके उपयोग, प्रबन्धतन्त्र एवं प्रभावों के बारे में कम ही अध्ययन हुए हैं मानक सन्दर्भित तथा निकष–सन्दर्भित उपागमों पर आधारित शैक्षिक मापन एवं मूल्यांकन की विधियाँ का विकास परिकरण एवं मानकीकरण इसके अतिरिक्त बाह्य एवं आन्तिरिक परीक्षाओं की वैघता विक्षृसनीयता एवं विशुदृता कुछ ऐसे श्रेय है जिन पर और अनुसंधान किया जा सकता है।

डॉ0 बुच द्वारा प्रकाशित सर्वे ऑफ एजूकेशन रिसर्चज इन इण्डिया में शैक्षिक अनुसंधान के निम्नलिखित क्षेत्र दिये गये है।

1– शिक्षा दर्शन, 2– शिक्षा का इतिहास, 3– शैक्षिक समाजशास्त्र, 4– सीखने एवं प्रेरणा का मनोविज्ञान, 5– परामर्श एवं निर्देशन, 6– परख एवं मापन 7– पाठ्यक्रम शिक्षण विधियाँ एवं पाठ्य पुस्तकें, 8– प्रोग्राम द्वारा सीखना, 9– शैक्षिक उपलीस्घ के सहचर, 10– मूल्यांकन, 11– अध्यापन और अध्यापक का व्यवहार, 12– शिक्षक शिक्षा, 13– शैक्षिक प्रशासन,

14– शैक्षिक प्रशासनिक वातावरण एवं छात्रों की उपलीस्ध पर उसका प्रभाव, 15– वातावरण एवं अध्यापन से सन्तुष्टि, 16– शैक्षिक अर्थशास्त्र, 17– सामाजिक शिक्षा एवं प्रौद शिक्षा, 18– शैक्षिक सर्वेक्षण, 19– तुलनात्मक शिक्षा, 20– उच्च शिक्षा आदि।

निष्कर्ष

आज देश में पुनः निर्माणकाल चल रहा है यह कार्य योग्य कार्यकर्ताओं द्वारा ही सम्भव हो सकता है। सुयोग्य कार्यकर्ताओं का निर्माण उचित शिक्षा प्रणाली की स्थापना से सम्भव है। उचित शिक्षा प्रणाली के विकास में अनुसंधान का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। देश में लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए सुयोग्य नेता, और विवेकशील अनुकरण करने वाले चाहिए अनुसंधान द्वारा ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करनी चाहिए जो योग्य नेता और चिन्तनशील नागरिक पैदा कर सकें। देश में आर्थिक विकास लाने के लिए यहां के लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना आवश्यक है। हम लोग आज भी नवीन तकनीकों के उपयोग के प्रति जागरूक नहीं है। और मानसिक रूप से उनको उपयोग में भयभीत रहते हैं। लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन शिक्षा द्वारा लाया जा सकता है। अतः ये कहा जा सकता है कि अनुसंधान शिक्षकों, छात्रों, अभिभावकों तथा प्रशासकों एवं पर्यवेक्षकों को स्वयं के ज्ञान, मनोविज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं का सुनियोजित समाधान प्रस्तुत करने के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण व आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *पाण्डेय के0पी0, शैक्षिक अनुसंधान, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी*
2. *सिंह डॉ0 रामपाल शर्मा डॉ0 ओ0पी0, शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा*
3. *सरीन एव सरीन, शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा*
4. *राय पारस नाथ, अनुसंधान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा*
5. *कैल लोकेश, शैक्षिक अनुसंधान कार्य प्रणाली, विकास पब्लिकेशन हाउस प्रा0लि0*
6. *सिंह अरूण कुमार, मनोविज्ञान, सामाजशास्त्र, तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, बांग्लोरोड दिल्ली प्रकाशित*

वर्तमान समय में साहित्यिक चोरी से बचाव

सुप्रिया रावत
शोध छात्रा
प्रौढ़ सत्त शिक्षा एवं प्रसार विभाग
हे० न० ब० केन्द्रीय वि० वि०
श्रीनगर गढवाल

साहित्यिक चोरी किसी दूसरे व्यक्ति के शब्दों या विचारों को अपना बनाकर प्रदर्शित करना है। इस स्थिति में व्यक्ति के जीवन व उसके शोध कार्य में किसी भी प्रकार की समस्या या बाधायें उत्पन्न हो सकती हैं। वर्तमान समय में साहित्य की चोरी में शोध कार्य में अधिक तीव्रता से वृद्वि हो रही है यदि कोई शोधार्थी साहित्यिक चोरी करता है तो उसके शोध कार्य को निरस्त कर दिया जाता है साथ ही उसे अनुर्तीण कर दिया जाता है। साहित्यिक चोरी का अर्थ **अमेरिकन हेरिटज डिक्शनरी** में इस प्रकार है–"किसी अन्य लेखक के विचारों तथा भाषा का अनाधिकृत उपयोग या नकल करके उसको अपनी मूल कृति के रूप में प्रस्तुत करना साहित्यिक चोरी कहलाता है। "साहित्यिक चोरी से बचाव हेतु अनेक उपाय हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं–1–साहित्यिक चोरी का अर्थ समझना, 2–अपने शोध विषय को ठीक प्रकार से समझना व शोध विषय की पूर्ण जानकारी रखना, 3–शोध विषय में लिये गये श्रोतों का संदर्भ देना, 4–शोधार्थी द्वारा कॉपी राइट से सम्बन्धित महत्वपूर्ण बातों को समझ लेना। शोधार्थी इन उपायों के द्वारा साहित्यिक चोरी से बच सकता है तथा अपने शोध कार्य को व्यवस्थित रूप से बाधा मुक्त हो कर सम्पन्न कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *hi.m.wikihow.com*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध विधि

शिप्रा सिंह
प्रवक्ता
शिक्षा शास्त्र विभाग
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

आज समाज का रूप अत्यधिक जटिल होता जा रहा है। इस जटिलता के कारण जीवन के रूप में भी अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। इन जटिलताओं के कारण अनेक समस्यायें जन्म लेती हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिये शिक्षा शास्त्रियों के द्वारा अपनाई जाने वाली वैज्ञानिक विधियों को शैक्षिक अनुसन्धान कहा जाता है।

आधुनिक युग में अनुसंधान का विशेष महत्व है

अनुसंधान किसी राष्ट्र की प्रगति के पहिचान चिन्ह है। अनुसंधान ज्ञान वृद्धि के साथ साथ मानव विकास को अत्यधिक महत्व प्रदान करता है।

अनुसंधान का शाब्दिक अर्थ है लक्ष्य का अनुगामी होना या उसके पीछे–पीछे चलना जब तक कि अभीष्ट उत्तर न मिल सके।

ऐसा ही अर्थ इसके अंग्रेजी शब्द के समकक्ष होता है– Research, (Re =Again, Search= Explore) अतः इसका अर्थ है– बार–बार खोजना।

अब बात अगर शोध की करते हैं तो, जीवन के विभिन्न क्षेत्र में की गयी खोज को अनुसंधान का नाम दिया जाता है किन्तु शिक्षण के क्षेत्र में की गयी खोज को केवल और केवल शोध का नाम दिया जाता है।

वास्तव में अनुसंधान शब्द एक प्रक्रिया है जिसमें शोध तथा गवेषणा की उपक्रियायें भी सम्मिलित हैं, जिसमें अनेक प्रकार के तथ्यों को एकत्रीकरण तथा उनके विश्लेषण के आधार पर किसी समस्या का विश्वसनीय समाधान किया जाता है।

'अनुसंधान' शब्द में प्रकृति के अनुसार पूछताछ जाँच, गहन निरीक्षण, व्यापक परीक्षण योजनाबद्ध अध्ययन, सोद्देश्य एवं तत्परतायुक्त सामान्य निर्धारण आदि प्रक्रियायें महत्वपूर्ण हैं अर्थात् 'अनुसंधान' एक व्यवस्थित तथा सुनियोजित प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानवी ज्ञान में वृद्धि की जाती है।

शोध कार्यों से मानवी तनावों को भी कम किया जाता है। वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान की यह एक प्रभावशाली विधि है, क्योंकि अनुसंधान में किसी समस्या का वैज्ञानिक अन्वेषण सम्मिलित है। अन्वेषण की क्रिया इस बात का घोतक है कि समस्या की अति निकट से देखा जाये, उसकी जाँच पड़ताल की जाये और उसका ज्ञान प्राप्त किया जाये।

जिस प्रकार एक अच्छा शिक्षण अपने छात्र को निरन्तर जिज्ञासाओं को शान्त करने तथा उसका समुचित मार्ग दर्शन करने के लिये नये–नये प्रयोग रूपी प्रयास करता है। जिन्हें हम नयी खोज का नाम दे सकते हैं। ठीक उसी प्रकार किसी भी शोध को उपयुक्त विधि से करने की आवश्यकता होती है। अनुसंधान प्रक्रिया में शोध विधियाँ महत्वपूर्ण होती है।

अनुसंधान की विधियों का वर्गीकरण विद्वानों ने अनेक प्रकार से किया है। किसी ने क्षेत्र के अनुसार वर्गीकरण करते हुए शिक्षा सम्बन्धी, मनोविज्ञान सम्बन्धी तथा इतिहास सम्बन्धी, अनुसंधान के रूप में वर्गीकरण किया है तो किसी ने उसके उद्देश्य अथवा आँकड़े प्राप्त करने की विधि के आधार पर वर्गीकरण किया है।

सामान्य तौर पर अनुसंधान विधियों को निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है :–

ऐतिहासिक अनुसंधान

इसका सम्बन्ध भूत से है तथा यह भविष्य को समझाने के लिये भूत का विश्लेषण करता है।

वर्णनात्मक अनुसंधान

इसका सम्बन्ध वर्तमान से होता है तथा इसके अन्तर्गत अनुसंधान के विषय का स्तर निर्धारित करने का प्रयास करते हैं।

प्रयोगात्मक अनुसंधान

इसका उद्देश्य वैज्ञानिक रूप में दो या दो से अधिक तत्वों के सम्बन्ध की व्याख्या करना होता है।

ऐतिहासिक अनुसंधान

ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं, विकासों तथा अनुभवों की समालोचनात्मक जाँच है जो सावधानीपूर्वक तथा वैधता के साथ प्रमाणों को महत्व देती हुई समुचित साक्ष्यों पर आधारित होती है। इसके बाद, अन्य शोधकर्ताओं के समान ही ऐतिहासिक शोधकर्ता भी प्रदत्त संकलित करता है, प्रदत्तों की वैधता हेतु उनकी जाँच करता है तथा प्रदत्तों की विवेचना करता है।

ऐतिहासिक अनुसंधान के उद्देश्य

1. ऐतिहासिक अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य अतीत की घटनाओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करना है।
2. ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत के अध्ययन से वर्तमान का अध्ययन तथा भविष्य के लिये पूर्वकथन करना है।

3. ऐतिहासिक अनुसंधान के उद्देश्य अतीत के सम्बन्ध में वर्तमान की जिज्ञासा को शान्त करना है।
4. ऐतिहासिक अनुसंधान का उद्देश्य हमारे गौरवमयी अतीत का ज्ञान कराकर आत्म गौरव प्रदान करता है।

वर्णनात्मक अनुसंधान

वर्णनात्मक अनुसंधान विधि उन परिस्थितियों तथा सम्बन्धों से सम्बन्ध है जो वर्तमान में है, अभ्यास जो लागू है, वे दृष्टिकोण या अभिवृत्तियाँ जिनको वर्तमान में माना जा रहा है, प्रक्रियायें जो चल रही है, प्रभाव जिनकी अनुभूति हो रही है तथा वे परम्परायें या दशाये जो विकसित हो रही हैं।

वर्णनात्मक अनुसंधान के उद्देश्य

1. भावी अनुसंधान के प्राथमिक अध्ययन में सहायता करना जिससे अनुसंधान को अधिक नियंत्रित एवं वस्तुनिष्ठ बनाया जा सके।
2. मनोवैज्ञानिक विशेषताओं से परिचय प्राप्त करना तथा शैक्षिक नियोजन में सहायता करना।
3. वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण, भावी नियोजन तथा परिवर्तन में सहायता करना।

प्रयोगात्मक अनुसंधान

यह एक उन्नत विधि है जिसके अन्तर्गत हम किसी सूक्ष्म समस्या का सूक्ष्म समाधान प्रस्तुत कर सकते हैं। प्रयोगात्मक विधि अर्थ उपयोगिता की दृष्टि से अत्यन्त व्यावहारिक है क्योंकि इसमें अध्ययन नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता है।

प्रयोग में बहुधा किसी घटना को ज्ञात दशाओं में कराया जाता है तथा बाह्य प्रभावों को यथासम्भव दूर करते हुये निरीक्षण किया जाता है। जिससे प्रपंचे के सम्बन्ध को भली प्रकार प्रदर्शित किया जा सके।

प्रयोग विधि

1. चर एक ऐसा गुण है, जिसके विभिन्न मूल्य हो सकते हैं।
2. चर किसी घटना या प्रक्रिया का वह स्वरूप है जो अपनी उपस्थिति से किसी दूसरी घटना या प्रक्रिया को जिसका अध्ययन किया जा रहा है, प्रभावित करता है।

प्रयोगात्मक विधि के पद

1. समस्या चयन एवं उसका परिभाषीकरण।
2. सम्बन्धित साहित्य की खोज।
3. प्रयोग प्रारूप तैयार करना।
4. प्रदत्त संकलन।
5. प्रदत्त विश्लेषण एवं विवेचन।
6. निष्कर्ष प्राप्त करना।
7. परिणामों का लिखना।

गुणात्मक अनुसंधान

गुणात्मक अनुसंधान को प्रायः निषेधात्मक रूप में वर्णित किया जाता है, अर्थात् यह शोध अमात्रात्मक है। यह समस्या दो कारणों से है, प्रथम कुछ गुणात्मक अनुसंधान का परिणाम मात्रात्मक होता है।

द्वितीय यह निषेधात्मक अनुमान का प्रतिनिधित्व करता है। गुणात्मक अनुसंधान रूपावली पर आधारित है।

मात्रात्मक अनुसंधान

मात्रात्मक शोध से भाषा संकेत और तात्पर्य पर संकेन्द्रण तथा साथ ही, अतिसरल और अलगाव के बजाय समग्र और प्रासंगिक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से भिन्न हो जाता है।

फिर भी विश्लेषण के व्यवस्थित और पारदर्शी दृष्टिकोण को लगभग हमेशा ही यथातथ्यता के लिये आवश्यक माना जाता है।

मात्रात्मक पद्धतियों को संकेद्रित परिकल्पनाओं माप, उपकरणों और प्रायोगिक गणित के माध्यम से अधिक निरूपक विश्वसनीय और सटीक माप प्रदान करने वाले के रूप में देखा गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, अस्थाना डॉ0 विपिन श्रीवास्तव डॉ0 विजया अस्थाना कु0 निधि, अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा–2*
2. *शैक्षिक अनुसंधान एवं साख्यिकी, सिंह डॉ0, रामपाल शर्मा, डॉ0 ओ0पी0, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2*
3. *शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ, सरीन एवं सरीन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर गुणात्मक शोध–पत्र लेखन हेतु अध्ययन के दायरे व उसके महत्व का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

सीमा निगम
एसोसिएट प्रोफेसर
बी0एड0 विभाग
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

प्रस्तावना

मानव जाति ने अपने ज्ञान बुद्धि के बल पर अपनी सभ्यताओं व संस्कृतियों के रचना को करने में सफलता अर्जित की है, एवं इसे आगे बढ़ाया है मानव विकास का इतिहास ज्ञान एवं विवेक के सम्यक उपयोग जिज्ञासाओं, विभ्रमों तथा समस्याओं का निराकरण करने के प्रयासों का वर्णन कहा जाता है। मानव व्यवहार के तीन प्रमुख पक्षों में यथा–ज्ञान, भाव, क्रिया में भी ज्ञान की भूमिका व स्थान को सर्वप्रथम व सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। आधुनिक विज्ञान व प्रौघौगिकीय के विकास के पीछे भी ज्ञान पिपासा एवं अनुत्तरित प्रशनों व समस्याओं के समाधान खोजने की जिज्ञासा रही है। अनुसन्धान ऐसे ही प्रयासों का सुव्यवस्थित नियंत्रित तथा औपचारिक स्वरूप होता है। आधुनिक अनुसंधान प्रकिया को भलीभांति समझने के लिए मानव के द्वारा समय समय पर प्रयुक्त तार्किक चिन्तन तथा ज्ञार्नाजन करने सम्बन्धी विधियों पर दृष्टिपात करना उचित व आवश्यक प्रतीत होता है।

अनुसंधान की विधियों को दो मोटो भागों अर्थात् गुणात्मक विधियों व मात्रात्मक विधियों में बांटा जा सकता है। मात्रात्मक विधियों के विपरीत गुणात्मक विधियों में आंकिक सूचकांक वाले ऐसे प्रदत्तों का प्रयोग नहीं किया जाता है। गुणात्मक प्रकृति के चरों तथा उनसे प्राप्त प्रदत्तों का संकलन व विश्लेषण किया जाता है। यही कारण है कि इस प्रकार के अनुसंधानों में प्रायः अनुसंधान परिकल्पना का औपचारिक ढंग में परीक्षण नहीं किया जाता है एवं प्रदत्तों के गुणात्मक विश्लेषण से प्राप्त परिणामों के आधार पर अनुसंधान कर्ता उन्हें स्वीकार या अस्वीकार करने के आधार पर वर्गीकरण करते हैं। गुणात्मक अनुसंधानों में परिणामों की प्रामाणिकता व सामान्य कारणों की सम्भावना कम होती है। अतः गुणात्मक अनुसंधानों की एक बहुत बड़ी कभी उचित प्रविधि तथा उपकरणों के विकास का अभाव है। गुणात्मक विधियां केवल विशिष्ट अध्ययन किये गये मामलों पर जानकारी उत्पन्न करती है और इसके अतिरिक्त कोई भी सामान्य निष्कर्ष केवल परिकल्पना सूचनात्मक अनुमान है।

अध्ययन के उद्देश्य

वर्तमान समय में शोध में गुणात्मक शोध का महत्वपूर्ण स्थान है, भले ही शैक्षिक अनुसंधान में गुणात्मक अनुसंधान अब तक उपेक्षित रहा है, लेकिन पिछले दशक में विद्वानों ने इस विद्या पर राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जोर देना प्रारम्भ कर दिया है। प्रस्तुत अध्ययन द्वारा गुणात्मक अनुसंधान के निम्न उद्देश्यों से इसके महत्व को आंका जा सकता है––

1. ग्रह या समझने योग्य सिद्वान्तों की स्थापना करने में मूल्यांकन किये जा रहे किसी उतपाद या किसी कार्यक्रम की उपयोगिता के सामान्य रूप से आंकलित करने के स्थान पर वर्तमान के अभ्यास या प्रयासों को सुधारने की ओर अग्रसर संरचनात्मक मूल्यांकन के संचालन में।
2. शोधार्थियों के साथ सहयोगात्मक शोध में संलग्नता।
3. शोधार्थियों के शोध के प्रति गहनता बढाने की दृष्टि से।
4. सांख्यिकीय जटिलताओं के स्थान पर शोधार्थियों के अनुभव व अन्तदृष्टि के विकास की दृष्टि से।
5. किसी घटना के वास्तविक चित्रण का अध्ययन।
6. शोध में यांत्रिकता को न्यून करना।
7. शोधार्थियों में आत्मविश्वास व उसकी विश्वसनीयता बढ़ाने में।

विषयवस्तु

गुणात्मक प्रणाली के विकास एवं सत्यापन में हमारी विशेषज्ञता तथा अनुभव है, तथा हम मिश्रित प्रणालियों तथा विभिन्न दृष्टिकोण में सामान रूप से अनुभवी है वास्तव में हम समृद्व सूचनात्मक निष्कर्षों को प्राप्त करने के लिए गुणात्मक तथा मात्रात्मक दोनों तकनीकी का प्रयोग करते हैं।

70 के दशक तक गुणात्मक अनुसन्धान का प्रयोग के केवल मानव विज्ञान तथा समाजशास्त्र के विषय का उल्लेख करने के लिए होता था। 1970 और 1980 के दशक के दौरान गुणात्मक अनुसन्धान का प्रयोग अन्य विषयों के लिये किया जाने लगा। 1980–1990 के दशक के अन्त में मात्रा पक्ष की ओर से आलोचनाओं के बाद डेटा विश्लेषण की विश्वनीयता अनिश्चित विधियों के सम्बन्ध में परिकल्पित समस्याओं से निपटने के लिए गुणात्मक अनुसन्धान की नई तकनीकी विकसित हुयी जिससे पिछले 30 वर्षों में गुणात्मक अनुसंधान की स्वीकृति बढ़ने लगी।

गुणात्मक शोध का उद्देश्य मानवीय व्यवहार और ऐसे व्यवहार को शासित करने वाले कारणों को गहराई से समझना है। गुणात्मक विधि केवल कब, कहां, क्या की ही छानबीन नहीं करती बल्कि क्यों और कैसे को खोजती हैं। गुणात्मक शोध निर्देशन से कार्य करता है इसमें सामान्यतः अभिकल्प का प्रयोग नहीं करते बल्कि विकल्प खुले रखते हैं। गुणात्मक शोध लचीला होता है। चयन में अधिक स्वतन्त्र रहता है। इस शोध में उनके आधार पर विश्लेषण होता है। गुणात्मक शोध मात्रात्मक के स्थान पर व्यक्तिगत अनुभवों विश्लेषण पर जोर देता है। इसमें निष्कर्ष में भाव व पक्ष को स्थान दिया जाता है। यह कारण का विश्लेषण व सत्यापन करता है। गुणात्मक पक्ष को मापने के लिए मुख्य रीतियों, व्यवस्थित श्रृंखला सम्बन्ध प्रमामन तथा संकेत के आधार पर वर्गीकरण करते हैं।

गुणात्मक अनुसन्धान के लिये व्यवहार में कई पद प्रयुक्त किये जाते हैं, जैसे–नृ : शारदीय शोध व्यस्टि अध्ययन शोध, घटना क्रिया विज्ञानपरक तथा संरचनावाद सहभागी प्रेषण आदि। गुणात्मक अनुसंधान में जब नृःशारदीय शोध शब्द का प्रयोग होता है तब घटनाओं के नाम पर वर्तमान की घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। इसमें शोधकर्ता एवं शोधकर्ती का दृष्टिकोण खोज के गोचर के प्रति अधिक वैयक्तिक तथा मृद होता है। वह व्यक्तियों की अभिवृत्ति पसन्दों तथा व्यवहारों के कारणों तथा अभिप्रेरणाओं के प्रति समझ पैदा करने के लिये मौलिक लेखों, असंचरित साक्षात्कारों तथा सहभागी प्रेक्षण विधियों का प्रयोग करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि गुणात्मक अनुसन्धान गहनतापूर्वक किया जाने वाला एक ऐसा व्यवस्थित प्रक्रियाओं वाला अनुसंधान है। जिसमें गुणात्मक प्रदत्त संकलन की विधियों का प्रयोग कर परिकल्पनात्मक निष्कर्षों को मात्रात्मक व गुणात्मक रूप में प्राप्त किया जाता है तथा जिसका सम्बन्ध वर्तमान गोचर से होता है। गुणात्मक अनुसंधान के सम्बन्ध में उपरोक्त बातों से उसकी विशेषताओं को सरलता से समझा जा सकता है।

1. गुणात्मक अनुसंधान में आगमनात्मक उपागम का प्रयोग होता है।
2. इसमें शोधकर्ता या शोधकर्ती की अहं भूमिका होती है।
3. गुणात्मक अनुसंधान का केन्द्र बिन्दु विशिष्ट परिस्थिति संस्थायें, समुदाय तथा मानव समूह होता है।
4. यह मात्रात्मक प्रांप्ताकों का मापन तथा सांख्यिकीय विश्लेषण के स्थान पर निहित कारणों, व्याख्याओं और निहित अर्थों पर बल देता है।
5. यह संरचित उपकरणों के स्थान पर वैयक्तिक अनुभवों को अधिक बल देता है।
6. यह कम घटनाओं या कम समूह या कम सदस्य संख्या पर आधारित होता है।
7. इसमें संगठनात्मक प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।
8. इसकी आधार सामग्री साक्षात्कार प्रत्यक्ष प्रेक्षण तथा लिखित अभिलेख होते हैं।
9. गुणात्मक अनुसंधान विशिष्ट सन्दर्भ के साथ केन्द्रित रहता है।
10. गुणात्मक अनुसंधान ज्ञान के विशिष्ट सही या सत्य के मार्ग पर विश्वास नहीं करता बल्कि परिस्थिति जन्य ज्ञान पर बल देता है।

गुणात्मक अनुसंधानों में असम्भाविता प्रतिदर्शन विधियों जैसे–कोटा, प्रासंगिक उद्देश्य पूर्ण प्रतिदर्शन, क्रमबद्व प्रतिदर्शन, हिमकदंक प्रतिदर्शन, घनीभूत प्रतिदर्शन विधियों का प्रयोग कर शोध इकाइयों का चयन उद्देश्यानुरूप में कर पूर्व में वर्णित उपकरणों का प्रयोग करके प्रदत्त संकलित किये जाते हैं परन्तु प्रदत्तों की प्रकृति प्रयुक्त उपकरण या तकनीकी पर निर्भर करती है फिर भी ज्यादातर गुणात्मक अनुसंधानों में प्रदत्तों की प्रकृति गुणात्मक रूप में होती हैं। इस प्रकार प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के तीन स्तर होते हैं–

1. प्रदत्तों का संगठन
2. प्रदत्तों का विवरण
3. प्रदत्तों का निर्वचन

प्राप्त प्रदत्तों की विभिन्न विशेषताओं के आधार पर संगठित करने से उनका विवरण प्रस्तुत किया जाता है तथा प्रदत्तों के निर्वचन के लिए गुणात्मक अनुसंधानों में तीन प्रकार के विश्लेषण तकनीकी का प्रयोग किया जाता है–

1. विषय वस्तु विश्लेषण तकनीकी
2. निगमना विश्लेषण
3. तार्किक विश्लेषण

इन तीनों तकनीकी में विषयवस्तु विश्लेषण तकनीक का प्रयोग व्यवहारिक विज्ञान में इस तकनीकी विशेषताओं के आधार पर बहुतायत से किया जाता है निगमनात्मक विश्लेषण मानव शास्त्र में ज्यादा प्रयुक्त की जाती है जबकि तार्किक विश्लेषण का प्रयोग क्रास अध्ययनों में उपयोगी है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि गुणात्मक शोध हमारी समस्या को विस्तार से जानने में मदद करता है। गुणात्मक अध्ययन का उद्देश्य होता है–क्या, कब, कैसे का अध्ययन गुणात्मक शोध में एक पूरी प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है। गुणात्मक एक अपेक्षाकृत अधिक व्यापक, अधिक संवेदना वाली दृष्टि है इसमें पूरी घटनाओं का क्रम पता चलता है। नये ज्ञान की प्राप्ति होती है। वैधता और विश्वसनीयता की अवधारणा गुणात्मक अनुसंधान के क्षेत्र में अपेक्षा कृत विदेशी है। विश्वसनीयता और वैधता पर ध्यान केन्द्रित करने के बजाय गुणात्मक शोधकर्ता डेटा विश्वसनीयता का स्थान लेते हैं। गुणात्मक शोध के निष्कर्ष में भाव एवं पक्ष को स्थान दिया जाता है। यह अपेक्षाकृत घटना व उसके परिणाम या

प्रभाव के बीच सम्बन्धों पर केन्द्रित होता है और क्रिया व प्रतिक्रिया, घटना और उसके परिणाम या प्रयोजन और प्रभाव से जुड़ा रहता है।

सुझाव

गुणात्मक शोध में प्रमुख समस्या इसकी प्रतिष्ठा, व्यक्तिपररकता और ढीले विज्ञान में एक है। इस धारणा को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि गुणात्मक निष्कर्ष संख्यात्मक नहीं है भले ही गुणात्मक डेटा मात्रात्मक डेटा में परिवर्तित किया जा सकता है। गुणात्मक अनुसंधान की वैज्ञानिक नींव और प्रक्रियाओं को पूरी तरह से समझने के लिए गुणात्मक ढांचे और दार्शनिक परिप्रेक्ष्य की जांच करना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *एडलर पी.ए. और एडलर पी. (1987) में मेम्बरशिप रोल्स इन फील्ड रिसर्च, न्यूबरी पार्क, सीएः सेज।*
2. *www.scotbuzz.org.*
3. *मलिनो वस्क, बी (1922/1961) ऑर्गोनाट्स ऑफ द वेस्टर्न पैसिफिक, न्यूयार्क.ई.पी.डट्टन*
4. *Gupta .S.P.2011 Research Introductior, Sharda Pustak Bhawan,Allhabad*

अनुसंधान के अर्थ, महत्व एवं विधियों के सटीक विश्लेषण से ही शोधपत्रों की गुणात्मकता बढ़ेगी

पूर्णिमा अग्रवाल
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
अम्बाह पी.जी. कॉलेज
अम्बाह, मुरैना (म०प्र०)

'अनुसंधान' शब्द का अर्थ ज्ञान की प्रत्येक शाखा के गहन अध्ययन के निमित्त होने लगा है। अनुसन्धान को अंग्रेजी में रिसर्च (Research) कहा जाता है। रिसर्च में 'रि' शब्दांश आवृत्ति और गहनता का द्योतक है जबकि ''सर्च'' शब्दांश खोज का समानार्थी है

अनुसन्धान की प्रक्रिया में मुख्यतः वैज्ञानिक निरीक्षण सदैव क्रमबद्ध, सोद्देश्य एवं तरीके से प्रस्तुत किया जाता है , जिसके माध्यम से पुराने सत्यों को नये ढंग से प्रस्तुत किया जा सके। आज प्रत्येक क्षेत्र में ज्ञान की प्राथमिकता को समझना आवश्यक है जिससे शिक्षा और मनोविज्ञान के द्वारा हमारा प्रयास मानव के व्यवहार को समझने, उसकी भविष्यवाणी को करने तथा उस पर नियन्त्रण के लिए है। इसके लिये अनुसन्धान कार्य प्रमुख रूप से साधन मात्र है। हमारे देश में शिक्षा व्यवस्था को भी धर्म–निरपेक्ष माना है। मानव समाज, परम्पराओं तथा रूढ़ियों की लीक सदियों तक पीटता रहा है। इसके प्रवाह की गति को मोड़ना सरल नहीं है। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल यहीं तक सीमित नही है, बल्कि अन्य देशों से श्रेष्ठ है। उसमें वसुधैवकुटुम्बकम के भाव भी विकसित करना है। अनुसन्धानकर्ता सदैव सत्य ज्ञान की खोज में व्यस्त रहता है। अनुसन्धान उसकी इस उत्सुकता को शान्त करने का प्रयास करता है। अनुसन्धान सदैव प्रशासनिक समस्याओं को सुलझाकर स्वस्थ प्रशासनिक व्यवस्था के सफल संचालन में सहायक है। अनुसन्धान एक अध्यापक का प्राण होता है इससे सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक समस्याओं का समाधान कर प्रगति का पथ प्रशस्त करता है।

अनुसन्धान प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनो रूपों में होता है। प्रत्यक्ष विधि के द्वारा अन्तर्वस्तु का वर्णन, वस्तुनिष्ठ, नियोजित एवं संख्यात्मक रूप में करते हैं, जबकि अप्रत्यक्ष रूप में व्यक्ति की परिस्थिति के नियन्त्रण के लिये विशेष प्रयास की आवश्यकता नहीं पड़ती। यदि किसी बालक का व्यवहार समस्यात्मक हो, वह शैक्षिक, सामाजिक, संवेगात्मक दृष्टि से असमायोजित हो तो यह आवश्यक हो जाता है कि उसके समस्यापूर्ण व्यवहार के कारणों को ज्ञात किया जाए। जब व्यक्ति विशेष को मनोवैज्ञानिक केन्द्र में लाया जाता है , तो उसे विभिन्न प्रकार के परीक्षण देख कर उसकी शारीरिक, मानसिक तथा शैक्षिक स्थिति को समझकर उसका व्यक्तिगत इतिहास ज्ञातकर अभिलेख तैयार किये जाते हैं। इससे उसका अपने कार्य के प्रति दृष्टिकोण, साथियों के साथ व्यवहार, सफलता तथा असफलता और संवेगात्मक स्थिरता के विषय में गहन जानकारी प्राप्त करते हैं। अनुसन्धान के क्षेत्र में अनुशासन का विशिष्ट महत्व है। अनुशासन शब्द से आशय विनय, व्यवस्था, नियंत्रण नहीं है। यह एक नई अमेरिकन शब्दावली है जिसका प्रयोग विषय के लिये किया जाता है।

अतः हम कह सकते हैं कि अनुसन्धान शिक्षकों छात्रों तथा अभिभावकों, प्रशासकों एवं पर्यवेक्षकों को स्वयं के ज्ञान, परस्पर एक–दूसरे के ज्ञान एवं मनोवैज्ञानिक सामाजिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने में अहम भूमिका प्रस्तुत करता है।

इस अनुसन्धान का उद्देश्य शोध प्रबन्ध की विभिन्न विधियों के माध्यम से व्यक्ति के विश्लेषण ज्ञान एवं सोचने समझने की क्षमता को प्रस्तुत करता है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अंतर्राष्ट्रीय स्तर का शोध पत्र : महत्व, उद्देश्य, साहित्य चोरी से बचाव एवं चुनौतियाँ

रवीन्द्र मोदी
शोध छात्र
भूगोल विभाग
कोटा विश्वविद्यालय
कोटा (राज.)

हमीद अहमद
विभागाध्यक्ष
भूगोल विभाग
राजकीय महाविद्यालय
झालावाड़ (राज.)

मानव अपनी तर्क, बुद्वि, चिन्तन, मनन आदि के द्वारा प्राकृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का अवलोकन किया। वह निरन्तर खोज करता रहा कि किन परिस्थितियों में, किन–किन कारणों से कौनसे परिणाम निकलते हैं। मानव की जिज्ञासा की प्रवृति का ही परिणाम है वह अपने चारों ओर की दुनियाँ को देखने व समझने का अनवरत प्रयास करता है। जो जिज्ञासु व्यक्ति इन अनेक प्रकार के समस्याओं के उत्तरों को जानने का प्रयास करता है उसे शोधकर्त्ता कहा जाता है। व्यापक अर्थ में अनुसंधान (Research) किसी भी क्षेत्र में 'ज्ञान की खोज करना' या 'विधिवत गवेषणा' करना होता है। नवीन वस्तुओं की खोज और पुराने वस्तुओं एवं सिद्वांतों का पुनः परीक्षण करना, जिससे की नए तथ्य प्राप्त हो सके, उसे शोध कहते है। सामान्यतः अनुसंधान अंग्रेजी के 'Research' शब्द से बना है, जो मुख्यतः दो शब्दों के संयोजन Re + Search क्रमशः दोबारा, पुनः खोज या नया कर अनुसंधान करने से है अर्थात् जिसकी पूर्व में खोज हो चुकी है, उसे आगे संशोधित कर तथ्यात्मक एवं वैज्ञानिक बनाकर और आगे बढ़ाना एवं लोगों के समक्ष प्रस्तुत करना शोध (Research) कहलाता है।

प्रस्तुत शोध पत्र के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शोध की महत्ता प्रस्तुत कर समाज में इसकी आवश्यकता को बताना है, किन्तु इस बीच कई समस्याए एवं चुनौतियाँ सामने आती है। शोध पत्र लेखन में सर्वेक्षण प्रद्वतियों का प्रयोग कर अध्ययन को अधिक विष्लेषणात्मक एवं वैज्ञानिक बनाया गया है। इस लघु शोध–पत्र के मुख्य उद्देश्य में शोध पत्र लेखन में आने वाली समस्याओं पर विचार विमर्ष कर प्रस्तुत करना, शोध पत्र लेखन का प्रारुप प्रस्तुत करना, शोध पत्र की आवश्यकता व महत्वत्ता को समाज के समक्ष प्रस्तुत करना, शोध पत्र की आवश्यकता को उच्च शिक्षा में महत्वत्ता को बताना, पत्र लेखन में होने वाली त्रुटियों का पूर्व निर्धारण कर सुधारने की विधि प्रस्तुत करना आदि बिन्दुओं को ध्यान में रखकर शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया हैं।

इसके अतिरिक्त शोध पत्र की आवश्यकता व महत्व अनेक प्रकार से हैं। यह मानव समाज का वैज्ञानिक पद्वति से अध्ययन करके हमें अनेक प्रकार से सहायता पहुँचाता है। समाज की संरचना कार्यो, संगठनों उनकी समस्याओं आदि का हमें ज्ञान प्रदान करता है। इस ज्ञान का उपयोग समाज के विकास की योजनाओं को बनाने में किया जाता हैं। समाज की क्या–क्या समस्याएँ है ? इन सबका ज्ञान अंतर्राष्ट्रीय स्तर के अनुसंधान हमें समय–समय पर प्रदान करता हैं, जिसकी सहायता से समाज के विकास की योजनाएं अच्छी बनाई जा सकती हैं और लक्ष्यों को सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। एक अच्छे अंतर्राष्ट्रीय स्तर के शोध व शोध पत्रों की पूरे विश्व में महत्वत्ता रहती है। पूरे विश्व के प्रत्येक देश अपने नियम–कानून, नीतियां चाहे वह अंतर्राष्ट्रीय स्तर के हो या किसी सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक या भौगोलिक ही क्यो ना हो अपनी नीतियां बनाने से पूर्व इन शोध पत्रों का अध्ययन जरुर करते है, जिससे एक अच्छी योजना बन सके एवं जिससे एक राष्ट्र को सभी पहलुओं से लाभ प्राप्त हो और अच्छे समाज का निर्माण हो सके। वर्तमान में शोध पत्र का महत्व वैश्वीकरण से और अधिक बढ़ने लगाा है। कोई भी राष्ट्र अपनी नीतियां व योजनायें बनाने के लिए दूसरे देशों के शोध पत्रों का अध्ययन जरुर करते है, जिससे इसकी महत्वत्ता और अधिक बढ़ जाती है। वर्तमान में भारतीय शोध पत्रों की बात करे तो यहां के शोध पत्रों ने विश्व स्तर पर अपना प्रभाव बनाये रखा है। कोई भी देश अपनी नीति–कानून व योजना बनाने से पूर्व भारतीय शोध पत्रों का अध्ययन जरुर करता है। अतः हमें और चालिए की अपने राष्ट्र के शोध पत्रों की गुणवत्ता में और अधिक वृद्धि करने का प्रयत्न कर इसे और सुधारा जा सकता है। फिर भी वर्तमान में भारतीय शोध पत्र की महत्वत्ता अपने आप में पूरे विश्व में गुंज रही है।

शोध पत्र की आवश्यकता व महत्व अनेक प्रकार से हैं। यह मानव समाज एवं भौगोलिक परिदृश्यों का वैज्ञानिक पद्वति से अध्ययन करके हमें अनेक प्रकार से सहायता प्रदान करता है। इस ज्ञान का उपयोग समाज के विकास की योजनाओं को बनाने में किया जाता हैं। समाज की क्या–क्या समस्याएँ है ? इन सबका ज्ञान सामाजिक अनुसंधान के द्वारा हमें समय–समय पर प्रदान करता हैं, जिसकी सहायता से समाज के विकास की योजनाएँ बनाई जा सकती हैं और लक्ष्यों को सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। शोध पत्र का विज्ञान में बहुमुखी विकास के लिए अत्यंत महत्व हैं। शोध पद्वति एक व्यवस्थित अध्ययन है जो न एक तात्कालिक आवश्यकता हैं। शोध पत्र की प्रकृति तथा उद्देश्य वैज्ञानिक हैं। परन्तु कुछ चुनौतियाँ है, जो उसे पूर्ण रूप से वैज्ञानिक नहीं बनने देती हैं। शोध पत्र लेखन के अनेक महत्व और उपयोगिताएँ हैं लेकिन उसकी कुछ विषिष्ट समस्याएँ भी है, जैसे – घटनाओं की जटीलता, प्रकाशित आंकड़ों की समय पर उपलब्धता की कठिनाई, अवधारणा की समस्या, वस्तुनिष्ठता में कठिनाई, प्रयोगशाला का अभाव, मापन की समस्या, प्रमाणिकता व विश्वसनीयता की

समस्या, उपलब्ध विषय की जटिलता, शोध सामग्री की प्राप्ति की समस्या आदि चुनौतियों का सामना एक शोधकर्ता को करना पड़ता हैं।

निष्कर्ष

एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर का शोध पत्र लेखन के लिए पूर्व में शोध रणनीति का चयन एवं अनुसंधान डिजाइन बना कर उसके अनुरूप अपना कार्य सम्पादन करना चाहिए। जिससे एक अच्छे गुणवत्ता पूर्ण वैज्ञानिक शोध पत्र का निर्माण हो सके। यह तभी संभव है, जब एक शोधकर्ता अपने आप को इस विषय के इर्द–गिर्द अपने आप को ढ़ालकर आत्मबल, आत्मचिंतन एवं स्वयं के विचारों अनुभवो लोगों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर अपना लेख लिखे तो वह उसका शोध पत्र अवश्य ही एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जरुर पहुँचेगा। वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में उच्च शिक्षा की सहज उपलब्धता और उच्च शिक्षण संस्थाओं को इसकी महत्वता को बढ़ावा मिले और शोध का क्षेत्र ओर विस्तृत हो सके एवं समाज के सामने नई–नई जानकारी प्राप्त हो और एक सुव्यवस्थित विकसित समाज का विकास हो।

शीर्षक, प्रस्तावना और सारांश की उत्कृष्टता ही गुणात्मक शोधपत्रों की निकष है

शशिवल्लभ शर्मा
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
अम्बाह पी.जी. कॉलेज
अम्बाह, मुरैना (म०प्र०)

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रों को कैसे गुणात्मक बनाया जाए, यह प्रश्न हर एक नये शोधार्थी के लिये जिज्ञासा का विषय है। आज उच्च शिक्षा में शोधार्थियों–प्राध्यापकों के लिए शोध पत्रों के प्रकाशन की अनिवार्यता हो गयी है। प्रश्न यह नहीं कि पत्र छपेगा कैसे ? प्रश्न यह है कि इसकी गुणवत्ता को और बेहतर कैसे बनाया जाये ताकि लिखने के पश्चात स्वयं को आत्म संतुष्टि तो मिले ही, साथ ही पाठक के लिए भी मूल्यवान हो और उसकी जिज्ञासा का समाधान करता हो। भाषा–शिल्प की दृष्टि से भी संतुलित हो। ध्यान रखा जाये कि मानक भाषा ही शोधपत्र की मानक हो।

उपर्युक्त प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए यहाँ यह भी स्पष्ट करना चाहता हूँ कि शोध पत्र लिखने से पूर्व लेखक अपनी मानसिकता पर विचार करें। स्वयं से प्रश्न करें कि क्या हम अपने बायोडाटा में शोधपत्रों की संख्या बढ़ाने के लिए प्रकाशित करना चाहते हैं या वास्तविक अनुसंधान कर अपना, विद्यार्थियों और जिज्ञासुओं का ज्ञान बढ़ाना चाहते हैं। अगर आप की मानसिकता अनुसंधान की है तो निश्चित ही शोधपत्र गुणात्मक होगा।

दूसरा प्रश्न यह है कि इसे और अधिक श्रेष्ठ कैसे बनाया जाए? तो सबसे पहले शोधपत्र के शीर्षक का चयन करना चाहिए। शीर्षक ऐसा हो जिस पर शोधार्थी को उसका एक चौथाई वास्तविक ज्ञान हो। इस एक चौथाई ज्ञान पर चिंतन करना शुरू करे। चिंतन शोध का सबसे महत्वपूर्ण बिंदु है। चिंतन से हम पाते हैं कि विषय से संबंधित बहुत से विचारों की श्रृंखला हमारे सामने होती है, इन्हीं विचारों की श्रृंखला को हम लिपिबद्ध करते जाएँ। आज कंप्यूटर– मोबाइल का युग है विषय वस्तु को टाइप करते जाएँ ताकि महत्वपूर्ण बिन्दु विश्रृंखलित ना हो पाए। अब बात आती है शोध पत्र प्रस्तावना लिखने की। प्रस्तावना का अर्थ है विषय से पूर्व तद्संबंधी आरंभिक संक्षिप्त कथन, भूमिका, प्राक्कथन, इंट्रोडेक्शन। हम वह प्रस्तुत करें जो शीर्षक/विषय को ठीक से समझाने के लिए हो। उदाहरण के तौर पर यदि शोध पत्र का शीर्षक '' भारत के गाँवों में शौचालयों की स्थिति'' है, तब शोधार्थी को भारत के ग्रामीण जीवन की आर्थिक और सामाजिक स्थिति को समझाते हुए मानव जीवन में शौचालय के महत्व को संक्षिप्त में स्पष्ट करना होगा। तदोपरांत विषय को आवश्यक बिन्दुओं में विभक्त करना चाहिए। साथ ही इस बात का विशेष ख्याल रखा जाए कि पत्र में दिये गए आँकडे तथ्यात्मक व अद्यतन हों। जो भी संदर्भ दिया जा रहा हो वह मूल प्रमाणिक पुस्तक, पत्र–पत्रिका से हो। संदर्भ की प्रामाणिकता ही शोध को गुणात्मक बनाते हैं। साथ ही लिखते समय एकाग्रता पर ध्याान रखा जाए। विषय के मूल पथ से भटकने से बचने के लिये शोध के महत्व व उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसा करने पर उक्त समस्या से बचा जा सकता है।

सभी मुख्य बिन्दुओं को स्पष्ट करने के पश्चात सारांश लिखना चाहिए। सार शब्द का अर्थ है निष्कर्ष, निचोड, संक्षेप। भागती जिन्दगी में इंसान के पास समय का अभाव है। शोधार्थी या गैर शोधार्थी सर्व प्रथम प्रस्तावना देखने के तदोपरांत सीधे सारांश पढ़ता है, वह सारांश देखने के बाद लेख/शोध को समझने का प्रयास करता है, इसलिए सारांश को कुल शोधपत्र का अधिकतम एक चौथाई लिखना चाहिए। सार में लिखे गए शोधपत्र का सार प्रस्तुत करना चाहिए अर्थात जो विस्तृत है,विस्तार में है उसे संक्षिप्त करना ही सार है। सारांश में विचारों की पुनरावृति न करें। विशेषणों व अलंकारिकता के अनावश्यक प्रयोग से बचते हुए समास शैली का प्रयोग करना चाहिए। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ''शीर्षक, प्रस्तावना और सारांश की उत्कृष्टता ही गुणात्मक शोधपत्रों की आधार भूमि है।''

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रों में उद्देश्य एवं परिकल्पना की अनिवार्यता

मनोज कुमार शर्मा
सहायक प्राध्यापक
अर्थशास्त्र विभाग
अम्बाह स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अम्बाह, मुरैना (म.प्र.)

मनुष्य सदैव से ही जिज्ञासु एवं चिंतनशील प्राणी रहा है। उसकी इसी जिज्ञासु एवं चिंतनशील प्रवृति ने उसे सृष्टि के प्रारंभ से ही घटनाओं को सकारण समझने हेतु प्रेरित किया है एवं नित्य नयी–नयी खोजों के द्वारा वह अपनी जिज्ञासाओं की पूर्ति करता रहा है। इन्हीं खोजों में शोध को भी शामिल किया जा सकता है।

किसी भी अध्ययन को प्रारंभ करने से पहले उसके उद्देश्यों का निर्धारण करना आवश्यक होता है। अतः शोध समस्याओं के अध्ययन के उद्देश्य गवेषणात्मक होने चाहिए। किसी भी समस्या से संबंधित अध्ययन के मुख्यतः दो उद्देश्य होते हैं जो क्रमशः सामान्य उद्देश्य एवं विशिष्ट उद्देश्य कहे जा सकते हैं। अगर किसी समस्या का अध्ययन प्रथम बार किया जा रहा है, तो सामान्य उद्देश्य ही निर्धारित हो पाते हैं ज्यों–ज्यों समस्या से संबंधित विषय के संबंध में जानकारियाँ बढ़ती जाती हैं त्यों–त्यों अध्ययन का उद्देश्य विशिष्ट हो जाता है। साथ ही अध्ययन स्पष्ट सुनिश्चित एवं विशिष्ट हो जाता है। उद्देश्य तय हो जाने से अध्ययन में समय, धन एवं श्रम की भी वचत होती है। अनुसंधानकर्ता को उद्देश्यों को निश्चित करने के बाद तथ्य संकलन की प्रविधियों का चयन करना चाहिए। संकलित सामग्री का संकेतीकरण, वर्गीकरण, सारणीयन आदि की योजना निश्चित करनी होगी। यह सब अनुसंधान कार्य तभी निश्चित किये जा सकते हैं जब अनुसंधान उद्देश्य निर्धारित हो जाते है। अनुसंधान कार्य में अनुसंधान की समस्या के उद्देश्यों का निर्धारण भी बहुत महत्वपूर्ण होता है।

परिकल्पना शब्द परि + कल्पना दो शब्दों से मिलकर बना है। परि का अर्थ चारों ओर तथा कल्पना का अर्थ चिंतन है। इस प्रकार परिकल्पना से आशय किसी समस्या से संबंधित संभावित समाधान पर विचार करना है। अर्थात किसी समस्या कि विश्लेषण और परिभाषीकरण के पश्चात उसमें कारणों तथा कार्यकरण संबंध में पूर्व चिंतन कर लिया है। अर्थात अमुक समस्या का यह कारण हो सकता है। परिकल्पना को एक कच्चा सिद्धांत भी कहा जाता है, जिसकी सत्यता की जाँच वैज्ञानिक अध्ययन के द्वारा की जा सकती है। जब सत्य सिद्ध हो जाता है तब उसे सिद्धांत मान लिया जाता है। परिकल्पना का निर्माण इसलिए भी किया जाता है ताकि अध्ययन के दौरान अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्यों से न भटक जाए क्योंकि अगर अध्ययन के दौरान अनुसंधानकर्ता कुछ निश्चित विन्दुओं पर ही केन्द्रित रहेगा तो वह अपने उद्देश्य से विमुख हो जाएगा। इसलिए अध्ययन के संबंध में पहले से ही सामान्य ज्ञान के आधार पर कुछ निष्कर्ष निकाल लिया जाता है फिर वास्तविक तथ्यों के आधार पर उस निष्कर्ष की परीक्षा करली जाती है, जिससे यह पता चलता है कि परिकल्पना सही है या गलत। अच्छी परिकल्पनाओं का निर्माण अंतर्दष्टि एवं अनुभव पर निर्भर करता है।

किसी शोध विशेष में एक से अधिक परिकल्पना भी हो सकती हैं। प्रयोगात्मक शोधो में उपकल्पनाओं का निर्माण आवश्यक हो जाता है जबकि सर्वेक्षण शोधों में इसका निर्माण आवश्यक नहीं हो पाता। उपकल्पना का निर्माण शोधकर्ता को एवं शोध कार्य को एक दिशा प्रदान करता है तथा उस दिशा का निर्धारण करने में सहायता प्रदान करता है। जिस पर शोधकर्ता को आगे बढ़ना चाहिए। इस प्रकार उपकल्पनाओं का निर्माण दिशाहीन अन्वेषण को नियंत्रित करता है तथा ऐसे तथ्यों के संकलन को रोकता है जो अध्ययन के लिए चयन की गई समस्या के संदर्भ में अनावश्यक सिद्ध हो। इस प्रकार पता चलता है कि एक सफल शोध कार्य के लिए परिकल्पनाओं का निर्माण करना आवश्यक होता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि परिकल्पना किसी भी समस्या के लिए सुझाया गया वह उत्तर है, जिसकी तर्क पूर्ण वैधता की जाँच की जा सकती है। यह दो या दो से अधिक चरों के बीच किस प्रकार का सबंध है, ये इंगित करता है तथा यह अनुसंधान के विकास का उद्देश्य पूर्ण आधार भी है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

सामाजिक अनुसंधान में प्रतिवेदन का महत्व और उद्देश्य

मन्जु तोमर
सहायक प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
अम्बाह पी.जी. कॉलेज
अम्बाह, मुरैना

मनुष्य की क्रियाओं के सभी क्षेत्रो मे शोध के बोध और अर्थज्ञान की खोज निरंतर चलती रहती है परंतु की गई खोज को हम वैज्ञानिक उसी स्थिति में माना जा सकता है जब उसमे शोध के लिये जो तत्व आवश्यक है वह अंतर्निहित हों , यह मुख्य तत्व है निरीक्षण करना और कारण दर्शाना।

जब यह दोनों तत्व सामाजिक तथ्यो के लिये किये जाने वाले अनुसंधान में विद्यमान होते है तब उसे सही मायने में सामाजिक अनुसंधान कहा जा सकेगा सामाजिक अनुसंधान एक क्रमबद्ध और वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति है जिसकी सहायता से हम सामाजिक घटनाओ के सम्बन्ध मे नित नई ज्ञान की खोज कर सकते है सामाजिक अनुसंधान वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा की गई सामाजिक ज्ञान की वृद्धि का एक आधार है।

प्रतिवेदन का स्थान सामाजिक अनुसंधान में अत्यंत महत्वपूर्ण होता है सामाजिक अनुसंधान में तथ्यो का संकलन वैज्ञानिक विधियों की सहायता से किया जाता है और जो तथ्य खोजे जाते है वही सिद्दांत के रूप में हमारे सामने प्रकट होते है परंतु तथ्यों का महत्व तब तक कुछ नही होता जब तक वे सारणीबद्ध और वर्गीकृत न हो वर्गीकरण और सारणी भी अपना महत्व खो देगीं जब तक उसकी व्याख्या और विश्लेषण न किया जाए। प्रतिवेदन अनुसंधान का अंतिम चरण माना जाता है, क्योकि इसी के माध्यम से खोजे गए तथ्यों की व्याख्या और विश्लेषण किया जाता है।

प्रतिवेदन के उद्देश्य

प्रतिवेदन के उद्देश्य व्यक्तिगत और सामूहिक दोनो ही प्रकार के होते हैं। प्रतिवेदन के माध्यम से समाज से सम्बंधित नित नए ज्ञान की प्राप्ति तो होती है साथ ही साथ सर्वेक्षण करने वाले को आत्म संतोष भी होता है क्योंकि सामाजिक अनुसंधान के माध्यम से उसे समाज की नई जानकारियाँ प्राप्त होती है प्रतिवेदन के उद्देश्यों को हम निम्नलिखित बिंदुओ के माध्यम से समझ सकते है।

1. प्रतिवेदन का उद्देश्य एक ऐसे लेख को प्रस्तुत करना होता है जो मनुष्य के ज्ञान को विस्तारित करने में सहायक हो।
2. प्रतिवेदन का उद्देश्य है कि वह सामाजिक अनुसंधान से प्राप्त तथ्यों को समाज को सुपुर्द्द करें।
3. प्रतिवेदन का एक अत्यंत महत्व पूर्ण उद्देश्य यह भी है कि वह अर्जित किये हुए ज्ञान को नष्ट होने से बचाता है प्रतिवेदन में प्राप्त किए गए समस्त तथ्यो को लिपिबद्ध किया जाता है जो शोध के द्वारा प्राप्त किये जाते है।
4. प्रतिवेदन के द्वारा ही शोध से प्राप्त ज्ञान को एकत्र करके उसे पीढी दर पीढी हस्तांतरित किया जाता है।
5. प्रतिवेदन का प्रमुख उद्देश्य अनुसंधान करने वालों को आत्म संतोष की प्राप्ति कराना भी होता है इसलिए इसका मनोवैज्ञानिक महत्व भी होता है
6. प्रतिवेदन के ही माध्यम जिनसे योजनाओ का मूल्यांकन किया जाता है प्रतिवेदन के जरिये ही योजनाओ की सफलता और असफलता जांची जा सकती है।
7. प्रतिवेदन का उद्देश्य यह भी है कि वह अनुसंधान को जांच करने के उपरांत वैध अथवा अवैध घोषित करे।
8. प्रतिवेदन अनुसंधान को एक सारयुक्त संक्षिप्त स्वरूप प्रदान करके उसे भविष्य मे अनुसंधान करने के कुछ संकेत भी प्रदान करता है

प्रतिवेदन अपने उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति करके सामाजिक अनुसंधान को रोचक और वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करता है प्रतिवेदन ज्ञान के प्रसार में अपनी महती भूमिका का निर्वहन करता है प्रतिवेदन व्यक्तियों को अपने विचार प्रकट करने के लिये प्रेरित करके उनका उत्साहवर्धन करने मे भी सहायक होता है इस प्रकार से वह व्यक्ति के मूल्यवान विचारों का पोषण करके उनके महत्व को दर्शाता है जिससे ज्ञान के प्रसार में सहायता प्राप्त होती है।

अतः संक्षेप में हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि प्रतिवेदन का स्थान सामाजिक अनुसंधान में सर्वोपरि होता है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

सामाजिक अनुसंधान के अर्थ एवं महत्व

कौशलेन्द्र उपाध्याय
सहायक प्राध्यापक
इतिहास विभाग
अम्बाह पी.जी. कॉलेज
अम्बाह, मुरैना (म.प्र.)

संसार के समस्त जीवों में मनुष्य को ही उच्च कोटि का दर्जा प्राप्त है। मनुष्य को यह दर्जा अपने विवेक चातुर्य के माध्यम से प्राप्त हुआ है। मनुष्य की स्वभाविक प्रवृति होती है कि वह अपनी बुद्धि, चिन्तन तथा तर्क शक्ति की सहायता से अपनी समस्याओं का समाधान खोज लेता है। अपनी खोजी प्रवृत्ति के कारण ही मनुष्य अपनी आदिम अवस्था से वर्तमान अवस्था तक का सफर तय करने में सफल हुआ। मनुष्य में स्वभावतः ही जिज्ञासु प्रवृति होती जिसके परिणाम स्वरूप ही वह अपने चारों ओर के परिदृश्य को देखने, उन्हें समझने तथा रहस्यों की अबूझ पहेलियों को सुलझाने का प्रयास अनवरत करता रहा है। मनुष्य केवल अपने प्राकृतिक परिवेश की गुत्थियों को ही नहीं सुलझाता है वरन् सामाजिक परिवेश का निर्माता व संरक्षक भी है। जिज्ञासु प्रवृति होने के कारण ही मानव नित नये आवष्किारों को जन्म देते हैं। अपने आस–पास उपस्थित विभिन्न प्रश्नों का हल जानने का प्रयास करता है। उसकी इसी प्रवृति के कारण उसे शोध कर्ता कहा जाता है और जब खोज समाज से संबंधित होती है तो उसे ही हम सामाजिक अनुसंधान कहते है।

सामाजिक अनुसंधान का अर्थ

सामाजिक शोध के अर्थ को समझने से पहले हमें यह समझना होगा कि, शोध क्या है ? मनुष्य अपने स्वभाव से ही अर्थात जन्मजात ही जिज्ञासु होता है। वह प्रकृति और समाज में घटित विभिन्न घटनाओं के लिए जिम्मेदार परिस्थितियों तथा प्रश्नों को समझने की कोशिश करता है वह स्वयं प्रश्नों को खड़ा करता है तथा उन्ही प्रश्नों के जबाव ढूँढने के लिए प्रयास करता है इसी के साथ शुरू होती है सामाजिक अनुसंधान की प्रकिया। अनुसंधान का उद्देश्य है वैज्ञानिक प्रकियाओं के प्रयोग द्वारा प्रश्नों के उत्तर की खोज करना अथवा पुराने ज्ञान को ही दुबारा परीक्षण करके उसमें विश्लेषण करके नये सिद्धान्तों अथवा नियमों को बनाना ही शोध अथवा अनुसंधान कहलाता है। जब इस प्रकार का अनुसंधान सामाजिक दायरे में होता है, तब हम उसे सामाजिक अनुसंधान कहते हैं। सामाजिक अनुसंधान अपने नाम से ही स्पष्ट होता है कि यह सामाजिक जीवन के तथ्यों की खोज से संबंध रखता है क्योंकि इसी के माध्यम से हमें समाजिक घटनाओं और इनके तथ्यों के संदर्भ में जानकारी मिलती है।

शोध अथवा अनुसंधान का महत्व

सामाजिक अनुसंधान वस्तुतः समाज से जुड़ा हुआ है और यह सामाजिक घटनाओं को जानने के लिए ही प्रयत्नशील है। हमारा संसार रहस्यों का भंडार है मानव इन रहस्यों को उद्घाटित करने के लिए भरसक प्रयास करता है। इसीलिए सामाजिक जीवन और घटनाओं को उद्घाटित करना ही सामाजिक अनुसंधान की मूल पहचान है। सामाजिक अनुसंधान नवीन ज्ञान की प्राप्ति में सहायता करता है। ये नवीन ज्ञान नये समाज के निर्माण में सहायक होते है। अज्ञानता के कारण जिन समस्याओं का बोलवाला है, उनमें जातिवाद, धार्मिक भावना, प्रान्तवाद, भाषावाद आदि प्रमुख है। नवीन ज्ञान की प्राप्ति से सत्य को जानने में मदद मिलती है। जिससे मानव ज्ञान की वृद्धि होगी तथा अज्ञानता का नाश होगा। सामाजिक अनुसंधान के द्वारा अनेक प्रकार की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है जैसे–निर्धनता की समस्याऐं, अपराध की समस्याऐं, पारिवारिक तनाव एवं विघटन की समस्याऐं आदि। सामाजिक अनुसंधान सामाजिक दशाओं के वैज्ञानिक अध्ययन में मदद करके सामाजिक कल्याण में बृद्धि करता हैं सामाजिक अनुसंधान विकसित तथा अविकसित समाज का तुलनात्मक अध्ययन करता है। जिससे हमें एक निश्चित दिशा प्राप्त होती हे। जो कि, सामाजिक प्रगति में अत्यंत सहायक है। सामाजिक अनुसंधान लोगों के व्यवहार और दृष्टिकोण को बदलने में भी अहम भूमिका का निर्वहन करता है। जिससे नवनी ज्ञान की प्राप्ति होती है।

सामाजिक अनुसंधान का महत्व यह भी है कि इसके माध्यम से समाज में व्याप्त समस्याओं के निदान हेतु मार्ग प्रशस्त होता है। सामाजिक जीवन का वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सके। सामाजिक जीवन का वैज्ञानिक अध्ययन सामाजिक अनुसंधान के द्वारा ही संभव है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध अध्ययन के उद्देश्य एवं परिकल्पना

बृजमोहन बंसल
सहा.प्राध्यापक
वाणिज्य विभाग
अम्बाह पी.जी. कॉलेज
अम्बाह, मुरैना

शोध कार्य को सम्पन्न करने के लिए उसके उद्देश्यों का निर्धारण करना आवश्यक है। मानवीय प्रयास के मूल में कोई न कोई उद्देश्य अवश्य निहित होता है। शोध कार्यों का मूल उद्देश्य ज्ञान में वृद्धि करना अथवा अज्ञात की जानकारी प्राप्त करना है। उद्देश्य विहीन के शोध कार्य उस यात्रा के समान है जिसका गन्तव्य स्थान स्वयं चालक को पता नहीं है। शोध प्रबन्ध का उद्देश्य जहाँ एक ओर सैद्धान्तिक है वही दूसरी ओर व्यवहारिक भी है। दूसरे रूप में सभी शोध प्रबन्धों के उद्देश्य भी भिन्न–भिन्न होते हैं। शोध का उद्देश्य ज्ञानार्जन के साथ–साथ सम्बन्धित कारणों को जानने के लिए किया जाता है। कुछ शोध कार्यों का मूल उद्देश्य किसी विशिष्ट समस्या का समाधान ढूंढने के लिए तथा किसी शोध का उद्देश्य प्रचलित कल्याण कार्यक्रमों को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना भी होता है। अतः शोध कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व शोधार्थी के मस्तिष्क उद्देश्यों की स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिए, क्योकि शोधार्थी शोध कार्य करते समय यह नहीं देखता कि किसी विशेष दशा मे समाज को लाभ हो रहा है अथवा हानि, वरन् उसका उद्देश्य इस अर्थ में केवल वैज्ञानिक होता है कि वह निष्कर्षों की चिन्ता किये बिना केवल ज्ञान के संचय के प्रयास में लगा रहता है ऐसा करते समय शोधकर्ता के समक्ष तीन लक्ष्य प्रमुख होते हैं।

1. अज्ञात तथ्यों की वास्तविक जानकारी प्राप्त करना,
2. अनुसन्धान द्वारा उन तथ्यों के विभिन्न पक्षों का सूक्ष्म अवलोकन करना तथा
3. विभिन्न तथ्यों के बीच पाये जाने वाले सामान्य तत्त्वों को ढूँढ़कर उनकी व्यवस्थित रूप से व्याख्या करना।

इसका तात्पर्य यह है कि, सामाजिक शोध का उद्देश्य केवल नये सिद्धान्त का निर्माण करना ही नही होता बल्कि पुराने सिद्धान्तों का नई परिस्थितियों में सत्यापन करना भी होता है।

शोध का उद्देश्य सैद्धान्तिक होने के साथ व्यवहारिक भी होना चाहिये अर्थात् एक अनुसन्धानकर्ता को सामाजिक जीवन तथा सामाजिक घटनाओं को समझने के लिए केवल सिद्धान्त ही प्रस्तुत करना है जिनके द्वारा सामाजिक जीवन को अधिक स्वस्थ बनाया जा सके। वास्तविकता यह है कि, वह ज्ञान व्यर्थ है जिसका व्यावहारिक उपयोग न किया जा सके शोध के व्यावहारिक उद्देश्य को स्पष्ट करते हुये, एकॉफ ने लिखा है कि ''जो शोधकर्ता शोध से प्राप्त निष्कर्षों को अपने तक सीमित रखता है वह वास्तव में वैज्ञानिक होता है।'' इससे स्पष्ट होता है कि, शोध का उद्देश्य सैद्धांतिक होने के साथ–साथ व्यवहारिक भी होना चाहिये। परिकल्पना भी दो शब्दों से मिलकर बना है। परि का अर्थ है पूर्व तथा कल्पना का अर्थ है विचार एवं सिद्धान्त। इस प्रकार परिकल्पना का अर्थ हुआ पूर्व विचार या पूर्व सिद्धान्त। एक ऐसा विचार अथवा सिद्धान्त जिसे अनुसंधानकर्ता अध्ययन के लक्ष्य के रूप में रखता है तथा उसकी जाँच करता है तथा अध्ययन के निष्कर्ष में परिकल्पना को सत्य सिद्ध होने पर एक सिद्धान्त के रूप में स्थापित करता है। इस प्रकार से परिकल्पना एक कच्चा सिद्धान्त है जिसे अनुसन्धान में परीक्षण के लिए रखा जाता है।

सामाजिक घटनाओं के वैज्ञानिक अध्ययन में परिकल्पना का अत्याधिक महत्व है इसके बिना अनुसंधानकर्ता दुनिया की विविधता में इस प्रकार भटक जाता है, जिस प्रकार षहर में आकर किसान भटक जाता है। इसके महत्व को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है –

1. परिकल्पना अनुसंधान के क्षेत्र को सीमित करती है। क्योंकि अध्ययन का क्षेत्र बहुत ही विषाल होता है और ऐसी स्थिति में अनुसंधान असम्भव हो जाता है।
2. अनुसंधान का एक निष्चित उद्देश्य होता है चाहे वह व्यक्तिगत हो या सामूहिक। परिकल्पना के माध्यम से अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्य को अधिक तथ्यपूर्ण ढंग से स्पष्ट कर सकता है।
3. परिकल्पना के द्वारा अनुसंधानकर्ता का अध्ययन स्पष्ट हो जाता है। इससे उसे यह ज्ञात हो जाता है कि उसे क्या कार्य करना है।
4. सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित तथ्यों के संग्रहण में परिकल्पना सहायता करती है क्योंकि समाजिक घटनाओं से सम्बन्धित हम उन तथ्यों का संकलन करते है जो हमारे अध्ययन के उद्देश्य को स्पष्ट करते है, और यह परिकल्पना द्वारा ही संम्भव है।
5. परिकल्पना अनुसंधानकर्ता की दिशा को निर्देशित करती है। जिस प्रकार एक ध्रुवतारा रात में भटके हुए व्यक्ति की दिशा को निर्देषित करता है।
6. परिकल्पना से अनुसंधान की दिशा निर्देशित होती है परिकल्पना के सहारे अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में एक निष्चित दिशा में जाकर अध्ययन के सम्बन्ध में अपने निष्कर्ष देता है।

परिकल्पना के अभाव में अनुसंधान की स्थिति उस प्रकार की होती है जिस प्रकार कस्तूरी के लिए हिरण का भटकना अतः समाजिक अनुसंधान में उद्देश्य एवं परिकल्पना का अत्यधिक महत्व है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का गुणात्मक शोधपत्र लेखन

निशा श्रीवास्तव
वरिष्ठ प्रवक्ता
बी0एड0 विभाग
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

किसी समस्या पर शोध करके उससे एक निश्चित निष्कर्ष निकाल लेना ही शोधकर्ता का उद्देश्य नहीं होता बल्कि वैज्ञानिक तथा गुणात्मक ढ़ंग से प्रतिवेदन तैयार करना भी उसका एक प्रमुख उद्देश्य होता है।

सर्वोत्तम उपकल्पना, सुनियोजित अभिकल्प, रूचिपूर्ण विधियाँ तथा महत्वपूर्ण निष्कर्ष, उस समय तक व्यर्थ होते हैं जब तक कि उन्हें दूसरों तक न पहुँचाया जाये। यह कार्य शोधपत्र लेखन द्वारा ही पूर्ण होता है। किसी भी प्रतिवेदन अर्थात् शोधपत्र का मूल उद्देश्य अन्य लोगों को यह अवगत कराना होता है कि शोधकर्ता द्वारा अमुक समस्या के समाधान को किन–किन चरणों में पूर्ण किया गया। इससे वैज्ञानिक ज्ञान का प्रसार होता है।

गुणात्मक शोधपत्र लेखन की महत्ता को स्पष्ट करने के लिए अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ (American PsychologicalAssociation, 1983) ने एक प्रारूप तैयार किया है जिसे प्रकाशन मैन्युअल कहा जाता है। वर्तमान समय में सभी शोधों को मानक शोध जर्नल (Standard Research Journal) में इसी प्रारूप में प्रकाशित किया जा रहा है। भारतीय शोधकर्ता भी इसी प्रारूप का मानक मानकर अपना शोध उसी ढ़ंग से प्रकाशित कर रहे हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के मानकों के अनुकूल शोधपत्र लेखन से शोधों में सार्वभौमिकता आयी है। किसी शोध के निष्कर्ष राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी समानता रखते हैं। जो परिणाम हमें किसी महत्वपूर्ण शोध से राष्ट्रीय स्तर पर प्राप्त होते हैं वही परिणाम अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिदर्श पर भी प्राप्त होते हैं। इससे किसी भी शोध की गुणात्मकता की जाँच होती है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के गुणात्मक शोधपत्र लेखन के लिए तीन महत्वपूर्ण तथ्यों का ध्यान रखना चाहिए– स्पष्टता (Clarity), यर्थाथता (Accuracy) तथा संक्षिप्तता (Conciseness)।

शोधपत्र लेखन का उद्देश्य पाठकों का मनोरंजन करना नहीं है न ही किसी प्रत्यय के सम्बन्ध में सामान्य मत प्रस्तुत करना है। इसके द्वारा उपकल्पनाओं का निर्माण होता है, सिद्धान्तों का विकास होता है तथा ज्ञान कोश में कुछ योगदान होता है। अतः इसको बहुत सोच समझकर स्पष्ट रूप में लिखना चाहिए जिससे कि वांछित सामग्री दूसरों के समक्ष प्रभावपूर्ण रूप से प्रस्तुत हो सके। शोधपत्र लेखन बहुत ही व्यवस्थित और तार्किक क्रम में लिखा जाना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के शोधपत्र लेखन की गुणात्मकता बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ (American Psychological Association, 1983) ने जो प्रारूप तैयार किया है, उसी प्रारूप को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ताओं को अपना शोधपत्र प्रस्तुत करना चाहिए।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर का गुणात्मक शोधपत्र लेखन

मंजुला
असिस्टेंट प्रोफेसर
एम. एड. विभाग
इस्लामिया टी. टी. (बी. एड.) कॉलेज
फुलवारीशरीफ, पटना

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गुणात्मक शोधपत्र लेखन का प्रयोजन विश्वदृष्टि (World View) को नया दृष्टिकोण प्रदान करना है। जैसा कि समाजशास्त्र विश्वकोष में लिखा है कि ''विश्व के प्रति सोचने–समझने के हमारे विषिष्ट दृष्टिकोण या नजरिये को विश्वदृष्टि कहा जाता है। यह वास्तविकता का एक मानसिक अवबोधन है। एक व्यक्ति विश्व एवं मानव के उद्भव और अस्तित्व के संबंध में क्या धारणायें रखता है, उसकी दृष्टि में विश्व और जीवन का क्या उद्देश्य है; इन सभी विषयों के प्रति सोच द्वारा उसकी विश्वदृष्टि का निर्माण होता है।'' जर्मन भाषा में 'विश्वदृष्टि' को 'वल्टेचुआंग' (Waltanschaung) कहा जाता है।

जहाँ तक गुणात्मक शोध पत्र लेखन का प्रश्न है यह शोधकार्य करने के पूर्व और पश्चात् दोनों स्थितियों में लिखा जाता है। शोधकार्य के पूर्व शोध पत्र लेखन को अनुसंधान अभिकल्प (Research wesign) या शोधकार्य की संक्षिप्त रूपरेखा

(Synopsis) कहा जाता है। इसमें अनुसंधान या शोध के उद्देश्यों की प्राप्ति के पूर्व ही उद्देश्यों का निर्धारण करके अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों को उद्घाटित करने के लिए पहले ही एक योजना बनायी जाती है। यह एक ऐसी योजना है, जो समस्या के प्रतिपादन से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन (Research Report) के अंतिम चरण तक विष्लेषण करती है। इसके साथ ही यह भी ध्यान रखा जाता है कि समस्त उपलब्ध विकल्पों पर ध्यान देकर इस प्रकार से निर्णय लिया जाये कि न्यूनतम प्रयासों (Efforts), समय (Time) वं लागत (Money) के व्यय से अधिकतम अनुसंधान उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। एफ0 एन0 कलिंजर ने भी 'फाउंडेषन ऑफ बिहेवरियल रिसर्च' में लिखा है कि 'अनुसंधान अभिकल्प अन्वेषण की योजना, संरचना (Structure) ,वं एक रणनीति (Strategy) है, जिसकी रचना इस प्रकार की जाती है कि अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो सके तथा विविधताओं (Variance) को नियंत्रित किया जा सके।''

शोधकार्य के पश्चात् लिखे गए पत्र लेखन को सारांश या उद्देशिका (Abstract) कहा जाता है। यह शोध प्रतिवेदन (Research Report) किसी शोध कार्य का अंतिम सोपान होता है। इसे शोधकार्य का परिणाम कहा जा सकता है। इसके अंतर्गत शोध द्वारा प्राप्त अथवा प्रमाणित तथ्यों का क्रमबद्ध प्रारूप प्रस्तुत किया जाता है। असत्य, संदिग्ध तथा अनुमान द्वारा ज्ञात तथ्यों का समावेष सारांश में नहीं किया जाता।

जहाँ तक 'शोधकार्य (Research Work) के सामान्य अर्थ का प्रश्न है, तो यह दो शब्दों 'रि' और 'सर्च' के संयोग से बना है। 'रि' अर्थात् बार–बार और सर्च अर्थात् 'खोजना'। इसका सम्मिलित अर्थ होता है खोज की पुनरावृत्ति। अतः 'शोध' शब्द से एक प्रकार की शुद्धि या संशोधन का बोध होता है। शोध के समानार्थी दो अन्य शब्दों का भी प्रयोग होता है– अनुसंधान और गवेषण। वास्तव में अनुसंधान एक प्रक्रिया है जिसमें 'शोध' तथा गवेषण उपक्रियायें भी सम्मिलित हैं। 'अनुसंधान' शब्द में प्रकृति के अनुसार पूछताछ, जाँच, गहन निरीक्षण, व्यापक परीक्षण, योजनाबद्ध अध्ययन, सोद्येष्य एवं सामान्यीकरण आदि प्रक्रियाएं महत्त्व रखती है। अन्वेषण की क्रिया इस बात का गवाह है कि कोई समस्या अति निकट से देखने–परखने की मांग करती है। अनुसंधान द्वारा उन मौलिक प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया जाता है, जिनका उत्तर अभी तक उपलब्ध नहीं था। प्राचीन काल में गवेषणा (Invention) जंगल में खो जानेवाली गायों को वापस लाने की व्यापक खोज को कहा जाता था। वर्त्तमान संदर्भ में 'गवेषणा' शब्द का प्रयोग किसी वस्तु, पदार्थ तथा नवीन तथ्य की खोज के लिए कर सकते हैं। 'कार्य' (Work) शब्द को समाजशास्त्र कोष में बताया गया कि ''अपने लिए या दूसरों के उपभोग या विनिमय के लिए वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन हेतु शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक प्रयासों की आपूर्ति को कार्य कहा जाता है।'' यदि वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक–सामाजिक कार्यों को देखें, तो हम कह सकते हैं कि "Anything that be doAnd requires energy in called work." इससे स्पष्ट होता है कि शोध के क्षेत्र में कार्य करके उन मौलिक प्रश्नों का उत्तर ढुँढ़ने का प्रयास किया जाता है, जिनका उत्तर अभी तक उपलब्ध नहीं हो सका है। इस दौरान हर प्रश्न का उत्तर मनुष्य के 'प्रयासों' पर निर्भर करता है। अतः शोधकार्य प्रयोगमूलक ज्ञान के साधन माने जाते हैं। ज्ञान का यह साधन जॉनी ड्यूबी के TryingAnd under going की प्रक्रिया का उदाहरण कहा जा सकता है।

शीर्षक शोधकार्य के उद्देश्यों पर आधारित होता है। यह समस्या के चयन का अप्रत्यक्ष आधार और प्रत्यक्ष संकेत प्रतिध्वनित करता है। शीर्षक के चयन में मानव समाज की आवश्यकता एव।अपेक्षा की आपूर्ति अथवा संतुष्टि काम करती है। यदि सूत्रबद्ध कहना पड़े तो हम कह सकते हैं कि –

आवश्यकता – साधन = समस्या

Need – Resources = Problem

इसका अर्थ यह हुआ कि आवश्यकता की संतुष्टि के साधन के मार्ग में उपस्थित बाधा ही समस्या है। जैसे ही समस्या समाधान के साधन खोज लिए जाते हैं, आवश्यकता की संतुष्टि हो जाती है और समस्या का अंत हो जाता है।

प्रस्तावना समस्या की गंभीरता, आवश्यकता की गहनता और साधनों की उपलब्धि पर निर्भर होती है। इस प्रकार आवश्यकता जितनी प्रबल होगी, अवरोध जितना तीव्र होगा, समस्या उतनी ही गंभीर होगी। प्रस्तावना में समस्या के आवश्यक पक्ष कारण और कार्य के बीच सह संबंध बनाते हुए क्रमबद्ध रूप से विवेचित किये जाते हैं।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि शोध–कार्य में व्यक्तिगत समस्या को कम महत्त्व दिया जाता है। जॉन सी0 राउनसेण्ड के अनुसार; ''समस्या तो समाधान के लिए प्रस्तावित प्रश्न है।'' (A problem isA question proposed for solution)

अतः विश्वस्तीय गुणात्मक शोधपत्र आलेखन में शीर्षक, प्रस्तावना एवं सारांश मानवीय ज्ञान–विज्ञान एवं संज्ञान के लिए त्रिध्रुवीय केन्द्रक सिद्ध हो सकते हैं। समसामयिक सार्वभौमिक समस्या समुचित शीर्षक, तार्किक प्रस्तावना एवं तथ्यात्मक संदर्भों का सारांश सृजित करती है। प्रस्तुत तीनों चरणों में साहित्यिक चोरी से बचना अनिवार्य है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का गुणात्मक शोध पत्र लेखन उद्देश्य एवं परिकल्पना

अरुन कुमार सिंह
शोधार्थी
शिक्षा संकाय
अभिनव सेवा संस्थान महाविद्यालय
कानपुर

अनुसंधान

सामान्य अर्थों में अनुसंधान वह प्रक्रिया है, जिसमें प्रदत्तों के माध्यम से मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है, तथा मानव जीवन को सुखमय और प्रभावी बनाया जाता है, अनुसंधान के माध्यम से नवीन तथ्यों की खोज की जाती है, तथा नवीन आंकडों का प्रतिपादन किया जाता है, ऐसी परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त की जाती है, जिनमें कोई चर क्रियाशील या निष्क्रिय होता है।

अंग्रेजी में अनुसंधान को Research कहते है, यह दो शब्दों के योग से बना है। Re +Search, Re का अर्थ होता है, बार–बार या पुनः पुनः तथा Search का अर्थ होता है, खोजना। इस प्रक्रिया के दौरान एक शोधकर्ता किसी प्रयास को बार–बार करके उसका समाधान खोजने का प्रयत्न करता है। शोध कार्यों के सहायक घटक चरों के सह–सम्बन्ध का विश्लेषण किया जाता है, तथा इनमें सह–सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है, यह शोधकार्य की विशिष्ठ परिस्थितियों तथा शोध की अवधारणाओं पर आधारित होता है।

वर्तमान समय में अनुसंधान का विशेष महत्व है, समाज और राष्ट्र की प्रगति को हम शोध परिणामों से समझ सकते है। शोध कार्यों में मानवीय विकास तथा कल्याण को महत्वपूर्ण समझा जाता है। समान्यतः अनुसंधान में भौतिक विषयों (विज्ञान) के प्रयोंगों को विशेष महत्व दिया जाता है, और ऐसे प्रयोंगों को ही अनुसंधान की श्रेणी में रखा जाता है,

यह अनुसंधान का व्यापक अर्थ नहीं है, क्योंकि वास्तव में अनुसंधान के माध्यम से हम उन प्रश्नों के उत्तरों को खोजने का प्रयास करते है, जो अब तक अस्तित्व में नहीं है, अर्थात उनका उत्तर प्राप्त नहीं हो सका हैं। यह अनुसंधान मानवीय प्रयासों पर आधारित होता है। जो कि पूर्णतः सत्यता के निकट नहीं समझाा जा सकता है।

''वैज्ञानिक शोध प्राकृतिक घटनाओं के बीच अनुमानित सम्बन्धों की खोज हेतु निर्मित परिकल्पनाओं का व्यवस्थित नियंत्रित अनुभाविक तथा आलोचनात्मक अनुसंधान है।''

उद्देश्य एवं परिकल्पना

शैक्षिक अनुसंधान अन्य सामाजिक विषयों के अनुसंधानों से भिन्न है, शैक्षिक अनुसंधान से नवीन ज्ञान की वृद्धि के साथ व्यवहारिक उपयोगिता भी होनी चाहिए।

शैक्षिक अनुसंधान के उद्देश्य

1. सैद्धान्तिक उद्देश्य
2. तथ्यात्मक उद्देश्य
3. सत्यात्मक उद्देश्य
4. व्यवहारिक उद्देश्य

सैद्धान्तिक उद्देश्य

शिक्षा अनुसंधान में वैज्ञानिक शोधकर्ता द्वारा नये सिद्धान्तों तथा नियमों का प्रतिपादन किया जाता है, इस प्रकार के शोध कार्य व्याख्यात्मक होते है, इसमें चरों के सह–सम्बन्धों की व्याख्या की जाती है, जिसका शिक्षा को प्रभावशाली बनाने में किया जाता है।

तथ्यात्मक उद्देश्य

शिक्षा के अन्तर्गत ऐतिहासिक शोधकार्य द्वारा नये तथ्यों की खोज की जाती है। इनसे वर्तमान परिदृश्य को समझने में सहायता मिलती है, इन उद्देश्यों की प्रकृति वर्णनात्मक होती है। क्योंकि तथ्यों की खोज करके उनका अथवा घटनाओं का वर्णन किया जाता है, नवीन अर्थों की खोज शिक्षा प्रक्रिया के विकास तथा सुधार में सहायक होती हैं।

सत्यात्मक उद्देश्य

दार्शनिक शोध प्रदत्तों द्वारा नवीन परिणामों का प्रतिस्थापन किया जाता है, इनकी प्राप्ति से परिणाम तक पहुँचा जा सकता है, दार्शनिक शोध कार्यो द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों सिद्धान्तों, शिक्षण विधियों तथा पाठ्यक्रम की रचना की जाती है, शिक्षा के प्राप्त अनुभवों का चिन्तन, बौद्धिक स्तर पर किया जाता हैं। जिससे नवीन सत्यों तथा मूल्यों का प्रतिस्थापन किया जाता है।

व्यवहारिक उद्देश्य

शिक्षा अनुसंधान के निष्कर्षों का व्यवहारिक प्रयोग होना चाहिए। परन्तु कुछ शोध कार्यों में केवल उपयोगिता को ही महत्व दिया जाता है। ज्ञान के क्षेत्र में इसका उपयोग नहीं होता है, इन्हें क्रियात्मक अनुसंधान से शिक्षा की प्रक्रिया अर्थात इनका समस्या के समाधान से भी इस उद्देश्य की प्राप्ति होती है।

''शिक्षा अनुसंधान का अन्तिम उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में निश्चित सिद्धान्तों और प्रक्रिया का विकास करना है।''

अनुसंधान अध्ययन के उद्देश्यों के आधार पर – इन्हें चार भागों में विभक्त किया जाता है।

1. विशुद्ध अनुसंधान (Pure Research) .
2. व्यवहारिक अनुसंधान (Applied Research) .
3. क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research) .
4. मूल्यांकन अनुसंधान (Evaluation Research) .

परिकल्पना

परिकल्पना शब्द का अर्थ एक उपकथन से होता है, जो कि समस्या का समाधान की अवधारणा होती है। शोधकर्ता उसकी पुष्टि करने का प्रयास करता है।

परिकल्पना के कथन का स्वरूप एक व्याख्या के रूप में होता है, जो अवलोकन के परिणामों या सिद्धान्तों पर पुष्टि की जाती है,तब ही उसे परिकल्पना की संज्ञा दी जाती है, शोध की समस्त क्रियायें परिकल्पना पर ही केन्द्रित होती हैं। एक अच्छी परिकल्पना शोधकर्ता को उत्तेजना या कार्य करने को प्रेरित करती है। परिकल्पना की पुष्टि से शोध के निष्कर्ष निकाले जाते है। परिकल्पना को अंग्रेजी में Hypothesis कहते है।

यह दो शब्दों के संयोग या मिलकर बना है। हाइपो (Hypo) + थीसिस (Thesis) = Hypothesis हाइपोथीसिस, जिसमें हाइपो (Hypo) का अर्थ होता है, सम्भावित या जिसकी पुष्टि की जा सके, थीसिस का अर्थ होता है, समस्या के समाधान का कथन। हाइपोथीसिस का शाब्दिक अर्थ है, उस सम्भावित कथन से है, जो समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है, परिकल्पना ऐसे समाधान को प्रस्तुत करती है, जिसकी पुष्टि प्रदत्तों के आधार पर की जा सके।

परिकल्पना को सम्भावित समाधान या सिद्धान्त भी कहा जाता है, इस कथन को अस्थाई रूप से सही मानकर इसकी पुष्टि का प्रयास किया जाता है, किसी शोध प्रक्रिया के नियोजन के लिए दिशा तथा आधार प्रदान करती है।

जॉन डब्लू बेस्ट के अनुसार

''परिकल्पना एक विचार युक्त कथन है, जिसका प्रतिपादन किया जाता है, और अस्थायी रूप से सही मान लिया जाता है, और निरीक्षण व प्रदत्तों के आधार पर, तथ्यों पर तथा परिस्थितियों के आधार पर व्याख्या की जाती है, जो आगे शोध कार्यों को निर्देशन देता है।''

गुड तथा हैट के अनुसार

''एक परिकल्पना वह बात कहती है, जिसे हम आगे सोचते है, परिकल्पना सदैव आगे को देखती है, यह एक साध्य होती है, जिसकी वैधता हेतु परीक्षण किया जाता है, यह सत्य सिद्ध हो सकती है, और नहीं भी हो सकती हैं।''

परिकल्पनाओं के प्रकार

परिकल्पनाओं रूप तथा सन्दर्भ के आधर पर कई तरह की होती है, परिकल्पना का रूप उसके कार्य के अनुसार पर निर्धारित किया जाता है, व्यावहारिक परिकल्पना एक ऐसे सम्भावित हल को प्रकट करती है, इसके अतिरिक्त सांख्यिकीय विश्लेषण अन्य प्रकार की परिकल्पना की जरूरत होती है, रूप तथा संदर्भ के आधार पर साधारणतः परिकल्पनायें चार प्रकार की होती है।

1. प्रश्न के रूप में (Question Form) .
2. घोषित कथन (Declarative) .
3. दिशायुक्त कथन (Direction Statement) .
4. दिशाविहीन कथन (Non- directional) .

प्रश्न के रूप में परिकल्पना

एक अच्छी परिकल्पना सरलतापूर्वक प्रदत्त संकलन को प्रदर्शित करना चाहिए। प्रश्न रूपी परिकल्पना में विशिष्टीकरण होता है, और नही भी होता है, इस प्रकार की परिकल्पनाओं का प्रयोग सरल शोधकर्यों में प्रयुक्त किया जाता है इसका रूप इस प्रकार होता है, कि उन्हें निरस्त भी किया जा सकता है, तथा स्वीकृति भी दी जा सकती हैं।

उदा– क्या पुनर्बलन के प्रारूप और बहिमुखी व्यक्तिगत का अधिगत उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

घोषित परिकल्पना

घोषित परिकल्पना में चरों के सह–सम्बन्धों की घोषणा की जाती है। पूर्व अपेक्षित सह–सम्बन्ध तथा चरों के उत्तर को परिकल्पना घोषित कथन के रूप में विकसित की जाती है, पहले अपेक्षित अन्तर का विश्वास उपलब्ध प्रमाणों तथा अनुभवों के आधार पर किया जाता है।

उदा0– पुनर्बलन के प्रारूप और बहिमुखी के व्यक्तित्व का अधिगत उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव होता है।

प्रश्न के रूप में परिकल्पना

जब किसी सम्भावित समाधान को अपेक्षित दिशा में लिखा जाता है। तब उसे दिशायुक्त परिकल्पना कहा जाता है। इसमें चरों के सह–सम्बन्ध को अपेक्षित रूप में प्रकट किया जाता है। इसी प्रकार चरों के अन्तर को विशिष्ट रूप में लिखते है, इस प्रकार की परिकल्पना का विकसित करना मुश्किल समझाा जाता है, क्योंकि अपेक्षित दिशा को प्रकट करने का पर्याप्त सैद्धान्तिक आधार होना जरूरी होता है, इसके सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा की सहायता ली जाती है, दिशायुक्त परिकल्पना को बिना सैद्धान्तिक आधार अथवा औचित्य के बैध नहीं माना जाता है।

उदा0– अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के छात्र पुनर्बलन के लगातार प्रक्रिया से ज्यादा सीखते है, और बहिर्मुखी व्यक्तित्व के छात्र पुनर्बलन के अन्तरिय प्रक्रिया के उत्तर प्रकार सीखते है।

इस प्रकार की परिकल्पना का रूप मुश्किल है, क्योंकि शोधकत्र को कुछ परिस्थितियों पैदा करनी होती है, कुछ शोधकर्त इस प्रकार की परिकल्पना को दोषपूर्ण बतलाते हैं, कि वह शोध कार्य में वस्तुनिष्ठ नहीं कर पाता है, जो दिशा प्रकट की है, उसकी किसी न किसी प्रकार की पुष्टि करना चाहता हैं। इसलिए आज दिशाविहीन परिकल्पना का प्रतिपादन ज्यादा किया जाता है।

दिशाविहीन परिकल्पना

इन्हें भ्रम वश शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis) भी कहते है, इसका प्रयोग केवल सांख्यिकी की सार्थकता के परिक्षण के लिए किया जाता है, इस प्रकार की परिकल्पना को नकारात्मक रूप में विकसित किया जाता है, चरों के सह–सम्बन्ध को नकारात्मक कथन लिखा जाता है, इसी प्रकार के चरों के अन्तर को भी नकारात्मक रूप में प्रकट करते है, इस प्रकार की परिकल्पना की विशेषता यह है कि इनके लिए कोई सौद्धान्तिक आधार या औचित्य प्रस्तुत नहीं करना होता है, शोधकर्ता को वस्तुनिष्ट भी रखती है, इनको विकसित करना अपेक्षाकृत सरल होता है, सम्बन्धित साहित्य समीक्षा की भी जरूरत नहीं होती है।

उदा0– बहिर्मुखी व्यक्तित्व तथा पुर्नबलन के प्रक्रिया का अधिगम उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव नहीं होता है।

निष्कर्ष

प्रायः हम किसी अनुसंधान कार्य करने का तात्पर्य होता है कि किसी नये सिद्धान्त या नियम को प्रतिपादित करें। या किसी किये गये शोध कार्य का वर्तमान परिस्थितियों तथा समस्याओं के निवारण हेतु उसका पुष्टिकरण पुनः किया जाये। जिससे देश व समाज के साथ–साथ बालकों के विकास को गति प्रदान की जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *कौल, लोकेश, 2009, शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, पृष्ठ संख्या–96*
2. *सिंह, रामपाल, 2012. शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2, पृष्ठ संख्या– 125*

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध विधियाँ

ज्योत्सना कटियार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
पं0 सहदेव प्रसाद त्रिवेदी महाविद्यालय
रमईपुर, कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

मानव अपने प्रारम्भ से ही जिज्ञासु रहा है अपने वातारण में घट रही घटनाओं के प्रति कौतूहल को शान्त करने के लिए वह निरन्तर प्रयास करता रहा है, उसे अपनी समस्याओं के समाधान हेतु खोज करनें की जिज्ञासा एंव प्रयास ने ही शोध को उत्पन्न किया है।

अनुसंधान का अर्थ है नये ज्ञान की खोज करना। चाहे वे नवीन तथ्य हो या पुराने ज्ञान की पुष्टि। ऐतिहासिक घटनाओं खोज तथा शोध से वैज्ञानिक शोध का जन्म हुआ है। एक बोद्धिक प्राणी होने के कारण मनुष्य नये तथ्यों की खोज करने का प्रयास करता है साथ ही पुराने सिद्धान्तों की पुनः परीक्षा भी करता है। इस कार्य में शोध हेतु वह विधियों एंव प्रविधियों का प्रयोग करता है।

अनुसंधान विधियों को मुख्यतः दो भागों मे बाँटा जा सकता है

(A) गुणात्मक विधियाँ
(B) मात्रात्मक विधियाँ

गुणात्मक विधियों में आंकिक सूचकांक वाले प्रदत्तों का प्रयोग नही किया जाता है। उसमें गुणात्मक प्रवृति के चरों तथा उनसे प्राप्त प्रदत्तों का संकलन व विश्लेषण किया जाता है। यही कारण है कि इस प्रकार के अनुसंधानों मे प्रायः अनुसंधान परिकल्पना का औपचारिक ढंग से परीक्षण नही किया जाता है। एवं प्रदत्तों के गुणात्मक विश्लेषण से प्राप्त परिणामों के आधार पर अनुसंधानकर्ता उन्हें स्वीकार या अस्वीकार करने सम्बन्धी अपना मत प्रकट करता है।

इस प्रकार के अनुसंधान से सत्य की खोज तथा जीवन की यथार्थता के परिप्रेक्ष्य मे परिणाम प्राप्त होते है।

मात्रात्मक विधियों में आंकिक सूचकांक वाले प्रदत्तों को प्रयोग किया जाता है। इनमें चरो का मात्रा के रुप में मापित किया जाता है। मात्रात्मक अनुसंधान सामाजिक कल्याण तथा भौतिक सम्पन्नता की दृष्टि से उचित होते हैं। इनमे परिकल्पनाओं का औपचारिक ढंग से परीक्षण किया जाता है। मात्रात्मक अनुसंधान की सर्वाधिक प्रचलित एंव प्रयुक्त विधि वर्णनात्मक अनुसंधान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. यू ट्यूब ग्लोवल हेल्थ विद ग्रेग मार्टिन रिचर्स मैथड
2. माथुर, जी0पी0 (2009) रिसर्च मेथडालॉजी
3. राय, पारस नाथ (1973) अनुसन्धान परिचय

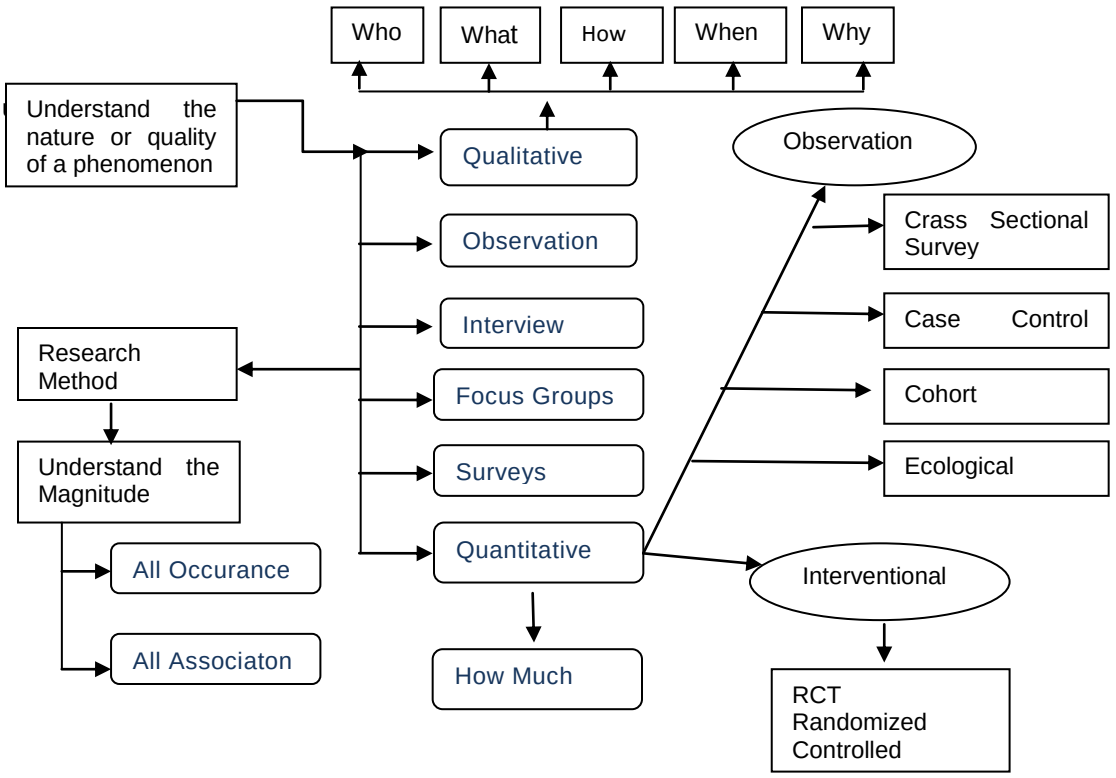

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अंतर्राष्ट्रीय स्तर का गुणात्मक शोध–पत्र लेखन

नीना श्रीवास्तव
प्रोफेसर
सरोजनी नायडू कन्या स्वशासी महाविद्यालय
शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

स्वाति गौर
शोधार्थी
सरोजनी नायडू कन्या स्वशासी महाविद्यालय
शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

वर्तमान में उच्चशिक्षा के विभिन्न आयाम एवं स्त्रोत हैं उच्चशिक्षा के क्षेत्र में शोध कार्य को अनिवार्य रूप से जोड़कर उसके महत्व को और बढ़ा दिया गया है, जिससे उसकी गुणवत्ता पर विचार करना एवं ध्यान देना आवश्यक है। विद्यार्थी की चिंतन दृष्टि को परिष्कृत करने के लिए शोध कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण है।

किसी भी शोधपत्र को लिखने से पहले उसका एक उद्देश्य होता है जो कि उसका प्रथम आधार स्तम्भ माना जाता है। बिना उद्देश्य एवं परिकल्पना के कोई भी शोध कार्य सुचारू रूप से नहीं किया जा सकता उद्देश्य हीन शोध कार्य के कभी भी सफल परिणाम नहीं देखें जा सकतें।

एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर का गुणात्मक शोध–पत्र लिखने के लिए प्रथम बिंदु उद्देश्य एवं परिकल्पना पर कुछ सुझाव दिये गये हैं। जिससे उसकी गुणवत्ता पर प्रभाव डाला जा सकता है :–

1. किसी भी शोधकार्य का उद्देश्य सर्वप्रथम मानव कल्याण हेतु किया जाना चाहिए।
2. उद्देश्य सामाजिक, व्यावहारिक, वस्तुनिष्ट ढंग से परिभाषित किया जाना चाहिए।
3. शोध का उद्देश्य विभिन्न तथ्यों पर आधारित एवं सिद्धांतों को प्रतिपादित करता दिखाई देना चाहिए।
4. शोध पत्र लेखन कार्य के पूर्व विषय वस्तु तैयार की जानी चाहिए।
5. पूर्व में हुए विषय संबंधित हुए विषय से संबंधित शोध पत्रों का अध्ययन कर शोध पत्र में और सुधार के दृष्टिकोण से कार्य किया जा सकता है।
6. नवीनीकरण की पद्धति को अपनाते हुए विषय से संबंधित नवीन साक्ष्य एकत्रित किए जायें।
7. किसी भी शोध कार्य का बहुत बड़ा आधार उसकी रचनात्मकता है, शोध पत्र रचनात्मक चिंतन के बाद लिखा जाये।
8. विषय विशेषज्ञों व अनुभवी व्यक्ति से परिचर्चा करके अपना कार्य प्रारंभ करें।
9. शोध कार्य का उद्देश्य जांचनीय हो, उसकी जांच करने पर विषय अपनी कसौटी पर खरा उतरे।
10. शोध पत्र का उद्देश्य सत्य की खोज करता हुआ दिखना चाहिए, जिसमें छिपे हुए सत्य तथ्यों का समावेश हो।
11. शोध कार्य से संबंधित किसी भी विशेष स्थिति का सही वर्णन किया जाना चाहिए।
12. शोध कार्य में प्रयोग कार्यविधि वैज्ञानिक होनी चाहिए।
13. शोध कार्य मितव्ययी होना चाहिए शोध कार्य में जरूरत से ज्यादा व्यय की स्थिति नहीं होनी चाहिए।
14. शोध कार्य मानव व्यवहार के प्रतिकूल नहीं होना चाहिए।
15. शोध पत्र की भाषा सरल एवं सहज होनी चाहिए जिससे वह जनसामान्य तक आसानी से समझा जा सके और उसका लाभ ले सके।
16. शोध पत्र अनुभवपूर्ण होना चाहिए बिना अनुभव के कोई भी शोध कार्य सही दिशा नहीं दिखाता।
17. शोध विषय सामाजिक होना भी आवश्यक है, हम समाज के उत्थान के लिए ही शोध कार्य करते हैं। इस हेतु विषय को समाज से जोड़कर कार्य करना अति आवश्यक है।
18. शोध विषय सारगर्भित होना चाहिए।
19. शोध कार्य की दिशा सामान्य से विशिष्ट की ओर केन्द्रित होना चाहिए।
20. एक विशेष उद्देश्य को लेकर परिकल्पना तैयार की जानी चाहिए।

हमारी भारतीय संस्कृति विभिन्न परिकल्पनाओं की जननी है और प्रत्येक समाज या देश की अपनी–अपनी विभिन्न संस्कृतियां है प्रत्येक संस्कृति सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में एक दूसरे से भिन्न होती है ये भिन्नता अनेक समस्याओं को जन्म देती है और जब इन समस्याओं के समाधानों पर चिंतन किया जाता है तो एक परिकल्पना तैयार की जाती है जो शोधकार्य लेखन के लिए अति आवश्यक है।

परिकल्पना के गुण

1. व्यवहारिक
2. सामाजिक
3. मितव्ययी
4. जांचनीय
5. रचनात्मकता
6. सारगर्भिता

7. मानव अनुकूल
8. वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित
9. सरल सहज
10. अनुभवपूर्ण
11. तार्किक
12. साक्ष्यपूर्ण
13. विकासशील
14. प्रेरणादायी
15. परीक्षणपूर्ण
16. नवीनीकरण
17. सैद्धांतिक

शोध परिकल्पना

परिकल्पना का अर्थ है शोध विषय के चारों और चिंतन कर, लेखन कार्य से पूर्व विषय के सम्भावित परिणामों, कार्यों एवं कारणों पर पूर्व में ही उसके समाधानों पर चिंतन करना। शोध संबंधित संपूर्ण समस्याओं के समाधान हेतु ही परिकल्पना का जन्म होता है।

परिकल्पना किसी भी शोध कार्य का दूसरा आधार स्तंभ है

1. परिकल्पना शोध कार्य योग्य होनी चाहिए।
2. शोध परिकल्पना सामान्य से विशिष्ट की ओर केन्द्रित होनी चाहिए।
3. सत्य पर आधारित एवं तर्कपूर्ण होनी चाहिए।
4. मानव व्यवहार के प्रतिकूल होना चाहिए।
5. व्यक्तिगत अनुभव भी परिकल्पना के निर्माण में बहुत सहायक होता है।

समस्या से संबंधित साहित्य का अध्ययन करके परिकल्पना का निर्माण किया जा सकता है।

शीर्षक, सारांश और प्रस्तावना

दीपक वर्मा
शोधार्थी
नृत्य संकाय–कथक विभाग
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
खैरागढ़, राजनांदगांव, छत्तीसगढ़

मानव सदा से ही एक जिज्ञासु प्राणी रहा है। मनुष्य की जिज्ञासु प्रवृत्ति ने उसे प्रारंभ से ही घटनाओं को सकारण समझने हेतु प्रेरित किया है। नित्य नई–नई खोजों के द्वारा वह अपनी जिज्ञासाओं की पूर्ति करता रहा है। मनुष्य में वातावरण को समझने और समस्याओं को हल करने की प्रवृत्ति होती है। मानव जिन वस्तुओं एवं व्यक्तियों के संपर्क में आता है, उनके विषय में जानने के लिए आदिकाल से ही जिज्ञासु रहा है।

मानव का प्रयत्न जब वातावरण को समझने और समस्याओं को हल करने का प्रयास भली–भांति सुनियंत्रित और सुव्यवस्थित होता है, तो उसे अनुसंधान (शोध) कहते हैं।

इन जिज्ञासात्मक प्रश्नों का उत्तर देने के प्रयास स्वरूप वह जिन तथ्यों को इक्ट्ठा करता है उन्हें हम ज्ञान की संज्ञा बतलाते हैं। जब इस ज्ञान को नियमित या क्रमबद्ध रूप से एकत्रित किया जाता है, वही ज्ञान शोध का रूप ले लेता है।

शोध पत्र लेखन किसी भी स्तर का हो राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय, किंतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) में उच्च शिक्षा के अंतर्गत शोध के संपूर्ण क्रम में गुणवत्ता के नये–नये आयामों को जन्म देता जा रहा है, जिसके फलस्वरूप वर्तमान समय में शोध एवं शोधार्थी दोनों में ही सरल एवं सहज रूप से गतिशीलता दिखाई दे रही है।

जिसमें शोधार्थी अपने शोध विषय के पंजीयन से पूर्व ही छः माही कोर्स के अंतर्गत शोध प्रविधि शोध के मुख्यतः छः चरण या सौपान हैं, जैसे :–

1. प्रस्तावना
2. परिकल्पना का प्रतिपादन
3. शोध की रूपरेखा
4. प्रदत्तों का संकलन
5. प्रदत्तों का विश्लेषण
6. सामान्यीकरण तथा निष्कर्षों का प्रतिपादन एवं कंप्यूटर आदि विषयों का अध्ययन कर चुका होता है।

प्रस्तावना में शोधार्थी यह स्पष्ट करता है कि उसने शोध का प्रस्तुत विषय ही क्यों चुना? उस शोध विषय की क्या आवश्यकता थी? प्रस्ताावना में ही उसे यह स्पष्ट करना होता है कि इस विषय पर अब तक क्या–क्या कार्य हो चुका है और वह स्वयं इस शोध–कार्य में किस उद्देश्य को लेकर प्रवृत्त हो रहा है। शोधार्थी को संक्षेप में इसका भी उल्लेख प्रस्तावना में कर देना चाहिए कि वह अपने इस प्रस्तावित शोध कार्य में पूर्ववर्ती शोधार्थियों द्वारा किस अभाव की पूर्त्ति करने जा रहा है। प्रस्तावना में ही शोधकर्ता अपने प्रस्तावित शोध–कार्य की योजना को दृष्टि में रखते हुए उसकी रूपरेखा और अध्यायों का विभाजन आदि प्रस्तुत करता है।

एक सर्वश्रेष्ठ प्रकार का अनुसंधान लेख लिखना आलोचनात्मक, सृजनात्मक तथा चिंतन स्तर का कार्य है। अनुसंधान पत्र लेखन में एक विशिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण करना होता है, जिसमें समुचित क्रम की व्यवस्था को अपनाया जाता है।

अनुसंधान पत्र के लेखकों को सामान्यतः दो स्रोतों की सहायता लेनी होती है, प्राथमिक स्रोत तथा गौण स्रोत। इन स्रोतों के आधार पर ही मूल्यांकन किया जाता है। उन्हें सत्य सिद्ध करने हेतु किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती है। अनुसंधान लेखन में अनेक विचारधाराओं तथा निरीक्षणों को प्रस्तुत किया जाता हैं, इसमें कोई आशंका होने की पुष्टि की जा सकती है। अतः एक शोधकर्ता को तथ्यों एवं विचारों का मिश्रण नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से शोध लेख का स्तर गिर जाता है।

शोध पत्र को सृजनात्मक रूप में लिखना चाहिए, जिसमें विचारों की अभिव्यक्ति स्पष्ट तथा सरल हो। शोधपत्र लेखन में शोधकर्ता के व्यक्तिगत विचारों का क्षेत्र बहुत कम रहता है। अतः शोध लेखन में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए।

प्रस्तावना में शोध की समस्या की स्पष्ट रूप से परिभाषा दी जाती है। शोध का मुख्य उद्देश्य प्रस्तुत किया जाता है और उसके महत्व का संक्षिप्त उल्लेख किया जाता है।

1. शोध पत्र लेखन का शीर्षक छोटा, सरल, सहज एवं साहित्यिक भाषा में होना चाहिए।
2. शोध पत्र का शीर्षक नदी के उद्गम स्थल की तरह होना चाहिए, जिसमें शोधकर्ता अपनी छोटी सी बात का विस्तार कर सके।
3. शोध पत्र के लेखन में आदि से अंत तक सभी क्रियाओं को एक ही प्रवाह के रूप में प्रस्तुत करना चाहिए।
4. शोध पत्र की भाषा तथा प्रस्तुतीकरण का प्रारूप वैज्ञानिक होना चाहिए।
5. शोध पत्र लेखन के शीर्षक एवं प्रस्तावना को लिखने में शीघ्रता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसको कई बार संशोधन की आवश्यकता होती है।
6. शोध पत्र लेखन समाज एवं समाज के सभी वर्गों के लिए उपयोगी सिद्ध होना चाहिए।

मैं आशा करता हूँ कि मेरे द्वारा लिखे गए इस शोध पत्र से सभी शोधार्थी एवं गुणीजनों के द्वारा वर्तमान में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तरों के शोध पत्रों में गुणात्मकता की संभावनाएं देखी जा सकती हैं।

हिन्दी साहित्य में गुणात्मक लेखन–सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के काव्य के विशेष सन्दर्भ में

सुमन लता वर्मा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
बाबू राम मोहन लाल विद्यालय
बिधुना, औरेया, उत्तर प्रदेश

वह दस्तावेज जो किसी शोधार्थी द्वारा किये गए शोध को विधिवत प्रस्तुत करता है। शोध प्रबन्ध कहलाता है इसके आधार पर विभिन्न प्रकार की नई प्रयोगात्मक रचनाओ का सृजन होता है। इसके आधार पर शोधार्थी को कोई डिग्री या सर्टिफिकेट प्रदान किया जाता है। डा0 नगेन्द्र के शब्दो में कहे, तो एक अच्छा शोध प्रबन्ध एक अच्छी आलोचना भी होती है। मनुष्य की आंतरिक जिज्ञासा सदा से ही अनुसंधान का कारण बनती रही है। नई कविता से सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के काव्य से प्रारम्भ होता है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपनी कविता में केवल जीवन के शक्तिशाली पक्षो का ही नहीं, जीवन के सम्पूर्ण अंशो को उजागर किया है। इसलिए उनकी कविता में कही गाँव की कच्ची सड़क है तो धूप में साफ होने वाली शहर की गन्दिगियों का चित्रण भी है। जीवन के प्रति गहरी आस्था ही उनकी कविता की मूल संवेदना हैं ।

सर्वेश्वर मानवीय मूल्यों और मानवीय संवेदना के कवि के रूप में न केवल विख्यात है अपितु यह उनके काव्य का एक सशक्त पक्ष भी है। नये कवियों में सर्वेश्वर उस कवि श्रृंखला की एक मजबूत कड़ी के रूप मे जिन्होंने मनुष्य के दुख दर्द उसकी दीन हीन परिस्थिति और व्यथा के प्रति अपनी साझेदारी व्यक्त की है।

सर्वेश्वर की तीव्र घातपूर्ण मानसिक प्रक्रिया काव्य वस्तु को अधिक सक्षम और सम्पन्न बनाती है। सर्वेश्वर समझौते के कवि न होकर विद्रोह के कवि है, यह विद्रोह वर्तमान व्यवस्था में निहित मौकापरस्ती को देखकर पनपता है। सर्वेश्वर के काव्य में संश्लिष्ट जीवन विम्ब अलग–अलग उभरते है किन्तु उनका वेदनात्मक हेतु और संवेदनात्मक अभिप्राय एक ही बिन्दु पर न्यस्त होता है। सर्वेश्वर के काव्य मे जो रोमानी तत्व है उन्ही से उनकी वैचारिक संवदेना का विकास हुआ है। सर्वेश्वर की वैचारिकता का मूल मंत्र यह है कि वे अराजकता, विश्रृखला, विकृति अस्तित्वहीनता और सड़ाध को कम करके स्वस्थ जीवन दृष्टि के आंकाक्षी है। सर्वेश्वर के काव्य में सम्प्रेषण शक्ति अद्‌भुत है उन्होने अपने अनुभवों को सम्प्रेषित करने के लिए सही भाषा का प्रयोग किया है, यही कारण है कि सर्वेश्वर की काव्यानुभूतियाँ सहज ही पाठक की चेतना से जुड जाती है।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना एक आलोचनात्मक कवि थे उन्होंने उस समय की सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक कुरितियों को अपनी रचनाओ के माध्यम से समाज को जाग्रत किया है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना एक अच्छे आलोचक थे और एक अच्छा आलोचक ही एक अच्छा शोधकर्ता हो सकता है। सर्वेश्वर जी का हिन्दी शोध पत्र लेखन मे एक अविस्मरणीय योगदान रहा है।

शोध पत्र लेखन
उत्तर भारत की टेराकोटा कला के विशेष सन्दर्भ में

अभिलाषा चौधरी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
चित्रकला विभाग
महिला महाविद्यालय पी0जी0 कॉलेज
कानपुर

भारत का नाम आते ही हमारे हृदय में इन्द्र धनुष रूपी सप्तरंगी सांस्कृतिक धरोहर का दृश्य मन और मस्तिष्क पर छा जाता है। विभिन्नताओं में एकता वाले इस देश में अनेक राज्य हैं। उत्तरी भारत में मुख्य रूप से लोक संस्कृति व टेराकोटा के लिए विख्यात पँजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और दिल्ली आते हैं, इन राज्यों की अपनी एक अलग लोक संस्कृति है जो अपने को दूसरे से अलग रखने का सामर्थ्य रखती है। ये सभी राज्य आपस में एक दूसरे से भौगोलिक रूप से सटे हुए हैं। इसी कारण संस्कृति का आदान–प्रदान भी स्वाभाविक मनोप्रवृत्ति है।

उत्तर भारत में टेराकोटा शिल्प का जिक्र आते ही हमारे मन में यहाँ के धार्मिक और दैनिक जीवन में झाँकने की जिज्ञासा के परिणाम स्वरूप वहाँ के दैनिक क्रियाकलापों और दैनिक उपयोग में आने वाले पात्रों और शिल्पों का ज्ञान हो जाता है। प्रायः देखने के फलस्वरूप हमने यही पाया है कि गाँव हो या शहर, प्रत्येक घर में मृणपात्रों व टेराकोटा का उपयोग पूजा–पाठ में या फिर साज–सज्जा में किसी न किसी रूप में होता है। एक घर बनाने के लिए नीव से लेकर दीवारों को खड़ा करने के लिए हमें ईंटो की आवश्यकता पड़ती है। वह भी हमारी मृण्मय कला का एक उदाहरण है; जो कि सिन्धु घाटी की सभ्यता व मोहन–जोदड़ों व हड़प्पा की सभ्यता से चला आ रहा है।

टेराकोटा के घरेलू मृणपात्र काफी सस्ते तथा हल्के एवं सरन्ध्र होते हैं, और प्रायः साधारण सहज गलनीय और अत्यधिक लचीली मिट्‌टी से बनाये जाते हैं। भारत में कुम्हार नदियों, तालाबों आदि में जमा हुई मिट्‌टी का प्रयोग करते है। ये मिट्‌टियाँ काफी लचीली और संगठन में समांग होती है। इनसे बने पात्र काफी सरन्ध्र होते हैं और भोजन बनाने और पीने का पानी रखने के लिए इनका प्रयोग बहुतायत से जनमानस में प्रचिलित है तथा इसी मिट्‌टी से मृण–मूर्तियाँ, फूलदान मिट्‌टी के खिलौने और घरेलू आवश्यकता के पात्र बनाये जाते हैं।

मृण्मय कला मानव जीवन को सदैव से आकर्षित करती रही है। यह मानव जीवन का एक अटूट अंग बनकर आज भी आवश्यकता के अनुरूप उससे जुड़ी है। मिट्‌टी का प्रयोग मानव के लिए सदैव सस्ता व सुलभ साधन रहा है। इसका उपयोग दैनिक जीवन, धार्मिक अनुष्ठानों, पर्वों व उत्सवों आदि पर किया जाता रहा है।

इस प्रकार मृण्मय–मूर्ति शिल्प बनाने के पीछे मनुष्य के मुख्यतः दो उद्‌देश्य रहे है–एक तो अतीत की स्मृति को जीवित बनाये रखना दूसरे अमूर्त को मूर्त रूप देना अव्यक्त को व्यक्त करना, अर्थात किसी भाव को आकार प्रदान करना। इन्हीं दोनों प्रेरणाओं से आरम्भिक मूर्तियों में इस प्रवृत्ति का बीच मिलता है। हाथी और घोड़े इत्यादि पशुओं की आकृतियाँ बनाकर मनुष्य ने अपने इर्द–गिर्द के जन्तु जगत की ओर सम्भवतः उसके ऊपर विजय की स्मृति सुरक्षित की है।

संचार क्रान्ति ने पुराने कुम्हारी कला को टेराकोटा कला के रूप में चार चाँद लगा दिया है। आज यह न केवल देश विदेश में सैलानियों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन चुका है बल्कि अब इण्टरनेट ने इसे वैश्विक बाजार भी देना शुरू कर दिया है इतना ही नहीं इस कला को समृद्ध बनाने और अक्षुण्य बनाए रखने के लिए अब सरकार भी इसमें योगदान देने लगी।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

अंतर्राष्ट्रीय स्तर के गुणात्मक शोधपत्र लेखन में परिकल्पनाओं का विश्लेष्णात्मक अध्ययन

विकास चौधरी
शोधार्थी,
इतिहास विभाग
जय नारायण व्यास विश्वविधालय,
जोधपुर

किसी भी सामाजिक प्रघटनाओं के वैज्ञानिक अध्ययन में परिकल्पना का निर्माण करना, उनकी उपयोगिता, अनुसंधान का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। किसी भी सामाजिक प्रघटना के वैज्ञानिक अध्ययन में अनुसंधानकर्ता वस्तुतः एक कदम भी आगे नहीं बढ़ता है जब तक उस अनुसंधानकर्ता के द्वारा अपना कार्य परिकल्पना से प्रारम्भ नही किया गया हो इसके अभवा में अनुसंधान की न तो दिशा निर्धारित होती है एवं न ही विषय–क्षेत्र का ज्ञान अनुसंधानकर्ता को होता है। परिकल्पना को दो या दो से अधिक चरों में मध्य पाये जाने वाले संबंध का अनुमानित विवरण भी कहाँ जाता है।

परिकल्पना का शाब्दिक अर्थ 'पूर्व–चिन्तन' अर्थात् पहले से सोचा गया कोई विचार या चिन्तन होता है। गुडे एवं हट्ट ने अपनी पुस्तक 'मैथड्स इन सोशयल रिचर्स' में लिखा है कि परिकल्पना भविष्य की ओर देखती है। यह एक तर्कपूर्ण वाक्य है जिसकी वैधता की परीक्षा की जा सकती है जो सत्य या असत्य दोनों ही सिद्ध हो सकती है। सामाजिक यथार्थ की जटिल एवं अमूर्त प्रकृति के कारण परिकल्पनाओं का कोई एक सर्वमान्य वर्गीकरण प्रस्तुत नही किया जाता है परन्तु डॉ. सुरेन्द्रसिंह ने इन्हे दो भागों में वर्गीकृत किया है– (1) तात्विक परिकल्पना– इसमें दो या दो से अधिक चरों के मध्य अनुमान पर आधारित संबंधों को व्यक्त किया जाता है। (2) सांख्यिकीय परिकल्पना– यह परिकल्पना तात्विक उपकल्पना के संबंधों से निगमनित साँख्याकीय संबंधों का एक अनुमान पर आधारित कथन है।

अनुसंधान में सामान्यतः परिकल्पनाओं का निमार्ण किया जाता है परन्तु यह समस्त परिकल्पना वैज्ञानिक नहीं होती है। सामान्यता एक उपयोगी अर्थात् श्रेष्ठ परिकल्पना के लिए निम्न विशेषतायें होना आवश्यक है– यह अवधारणात्म दृष्टि से स्पष्ट होनी चाहिए, इनका संबंध आनुभाविक प्रयोग सिद्धता से होना चाहिए, यह विशिष्ट तथा इनका संबंध उपलब्ध प्रविधियों से होना चाहिए। परिकल्पना का निर्माण शोधकर्ता को अत्यन्त धैर्य पूर्वक करना चाहिए परन्तु इसके बाद भी शोधकर्ता के समझ कठिनाइयाँ उपस्थित हो जाती है– स्पष्ट सैद्धान्तिक सन्दर्भ का अभाव तथा इसका तार्किक रूप से उपयोग में लाने का अभाव आदि प्रमुख है।

शोध का अर्थ

मीनाक्षी व्यास
एसोसिएट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
आर0एस0जी0यू0 पी0जी0 कालेज
पुखरायाँ, कानपुर देहात

शोध का अर्थ ''ज्ञान की खोज'' से होता है, अतः विभिन्न विधियों द्वारा ज्ञान की खोज करना ही शोध कहलाता है। किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हेतु हम विभिन्न प्रकार के विषयों से सम्बद्ध पूर्ण जानकारी प्राप्त करने हेतु जिस प्रक्रिया को अपनाते हैं उसे सांख्यिकी शोध कहते हैं। ध्यान रहे यह शोध अथवा ज्ञान की खोज सदैव सांख्यिकी रीतियों द्वारा ही की जाती है। सर्वश्री सिम्पसन एवं काफ्का के अनुसार ''किसी क्षेत्र विशेष में संख्यात्मक विश्लेषण द्वारा समस्या का तर्कपूर्ण निर्वचन करने के उद्देश्य से आवश्यक समंको के वैज्ञानिक ढंग से सम्पन्न की गयी संकलन प्रक्रिया को सांख्यिकी शोध कहते हैं।'' किसी समस्या से सम्बन्धित समंको का सही ढंग में संकलन व सम्पादन होना बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसकी शुद्धता पर्याप्तता तथा उपयुक्तता पर भी शोध की सफलता निर्भर होती है। ऐसी दशा में यह आवश्यक होता है कि शोध प्रारम्भ करने के पूर्व कुछ विशिष्ट बातों को ध्यान में रखा जाये तभी समस्या का विश्लेषण अथवा समस्या से सम्बन्धित मौलिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। जिस प्रकार किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व योजना बना लेने से सुविधा और स्पष्टता आती है उसी प्रकार किसी भी सामाजिक समस्या से सम्बन्धित मौलिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए एक निश्चित योजना बना लेना सदैव हितकर होता है। समंक संकलन का कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व अनेक ऐसे प्रश्न होते हैं जिनका समुचित उत्तर मालूम होना चाहिए, इन्हीं तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना व किसी सुनियोजित ढंग से शोध कार्य के प्रारम्भ करने को शोध का आयोजन कहते हैं।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

सामाजिक शोध का अर्थ

रश्मि पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
अकबरपुर पी0जी0 कालेज
अकबरपुर, कानपुर देहात

मानव क्रिया के सभी क्षेत्रों में शोध का अर्थ ज्ञान तथा बोध की निरन्तर खोज है। परन्तु वही ज्ञान व बोध वैज्ञानिक होते हैं जिनमें वैज्ञानिक शोध के दो आवश्यक तत्व अवश्य विद्यमान हों– इनमें से प्रथम तत्व है निरीक्षण। इसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से देखकर हम कतिपय तथ्यों के विषय में ज्ञान प्राप्त करते हैं। दूसरा तत्व है कारण दर्शाना जिसके द्वारा इन तथ्यों का अर्थ उनको पारस्परिक सम्बन्ध एवं विद्यमान वैज्ञानिक ज्ञान से उनका सम्बन्ध निश्चित किया जाता है। यही दोनों तत्व यदि सामाजिक तथ्यों के सम्बन्ध में किये गये अनुसंधान से विद्यमान हैं तो उसे सामाजिक शोध कहते हैं।

इस दृष्टिकोण से सामाजिक शोध का अर्थ किसी सामाजिक समस्या को सुलझाने या किसी प्राक्कल्पना का परीक्षा करने, नवीन घटनाओं को खोजने या कतिपय घटनाओं के बीच नवीन सम्बन्धों को ढूँढने के उद्देश्य से किसी यथार्थ विधि का उपयोग है। यह यथार्थ विधि इस प्रकार की होनी चाहिए जो कि वैज्ञानिक शर्तों को पूरी करती हो तथा जिसकी सहायता से अनुसंधान किये गये विषय का सत्यापन सम्भव हो।

दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक शोध वह क्रमबद्ध तथा वैज्ञानिक अध्ययन विधि है जिसके आधार पर सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में हम नवीन ज्ञान की प्राप्ति करते हैं या विद्यमान ज्ञान को विस्तृत या परिष्कृत करते हैं। एवं विभिन्न घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्धों की व उपलब्ध सिद्धान्तों की पुनः परीक्षा करते हैं और भी संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक घटनाओं या विद्यमान सिद्धान्तों के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रयोग में लाई गयी विधि सामाजिक शोध है।

परिकल्पना का अर्थ

अंजू शुक्ला
एसोसिएट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
अकबरपुर पी0जी0 कालेज
अकबरपुर, कानपुर देहात

अनुसंधान के प्रक्रम में समस्या के कथन के तुरन्त पश्चात् एक उपयुक्त परिकल्पना की रचना की आवश्यकता होती है। परिकल्पना के अभाव में वैज्ञानिक अध्ययन प्रायः सम्भव नहीं है। इसका कारण है समस्या का स्वरूप अधिकतर अत्यधिक विषम, विस्तृत तथा विसरित (Diffused) रहता है। ऐसी स्थिति में उसके व्यापक क्षेत्र को न्यून (Narrow Down) करना अत्यन्त आवश्यक होता है जिससे अध्ययन का स्वरूप स्पष्ट, सूक्ष्म तथा गहन हो सके। यदि परिकल्पना द्वारा ऐसा नहीं किया जाता है तब अनुसंधानकर्ता सम्बन्धित समस्या के अध्ययन के लिए इधर–उधर भटकता रहता है और इस प्रक्रिया में अनेक अनावश्यक तथा व्यर्थ के आँकड़े संकलित कर लेता है, क्योंकि परिकल्पना के अभाव में समस्या से सम्बन्धित आवश्यक तथ्यों अथवा चरों का उसे स्पष्ट तथा विशिष्ट ज्ञान नहीं होता। इस कारण अनुसंधान में परिकल्पना की रचना अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। ऐसा करने में अनुसंधानकर्ता को तर्क–संगत आँकड़ो के संकलन में ठीक दिशा (Direction) मिलती है तथा उपयुक्त वैध व शुद्ध निष्कर्षो के अनुमान (Inference) में सुविधा तथा सरलता रहती है। इस संदर्भ में परिकल्पना के अर्थ तथा स्वरूप का जानना नितान्त आवश्यक है।

प्रत्येक वैज्ञानिक अनुसंधान समस्या के समाधान के लिए किसी निर्देशित व्याख्या से प्रारम्भ होता है। ऐसे निर्देशित उत्तर अनुसंधानकर्ता को अध्ययन की विषय–सामग्री तथा अपने पूर्व ज्ञान से प्राप्त होते हैं। इन आधारों पर जब अनुसंधानकर्ता किसी समस्या के समाधान के लिए निर्देशित व्याख्या (Suggested Explanations) को बनाता है तो इन्हें परिकल्पना /परिकल्पना कहा जाता है।

परिकल्पना इस बात का वर्णन करती है कि हम क्या देखना चाहते हैं। परिकल्पना भविष्य की ओर देखती है। यह एक तर्कपूर्ण वाक्य है जिसकी वैधता की परीक्षा की जा सकती है। यह सही भी हो सकती है, गलत भी। इसका तात्पर्य यह हुआ कि जब अनुसंधानकर्ता के सामने कोई समस्या आती है तो उसका विश्लेषण करने के बाद वह कुछ सम्भावित सुझाव प्रस्तुत करता है और फिर अनुसंधान–कार्य में उस सुझाव की सत्यता की जाँच करता है। इसी सुझाव को परिकल्पना कहते

हैं।

उपरोक्त के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ''परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के अनुमान पर आधारित तर्कपूर्ण, कार्यक्षम, प्रस्तावित और परीक्षण योग्य कथन है, जो यह बताता है कि हम क्या देखना चाहते हैं। जाँच के बाद यह कथन सही भी हो सकता है और गलत भी। समस्या के पश्चात् परिकल्पना निर्धारित करनी चाहिए। परिकल्पना प्रयोगों या अध्ययन को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है। परिकल्पना और समस्या में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है।'' परिभाषाओं में कहा जा चुका है कि समस्या का प्रस्तावित उत्तर ही परिकल्पना है। परिकल्पना की अनुपस्थिति में प्रयोग या वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है। अतः कहा जाता है कि परिकल्पना वैज्ञानिक अध्ययन में उसी प्रकार सहायक है जैसे अंधेरे में जा रहे व्यक्ति के लिए प्रकाश आवश्यक है जिस प्रकार प्रकाश की अनुपस्थिति में व्यक्ति अँधेरे में रास्ता भूल जाता है उसी प्रकार परिकल्पना की अनुपस्थिति में व्यक्ति अध्ययन से उत्पन्न होने वाली समस्याओं में रास्ता भूल सकता है।

सामाजिक शोध का अर्थ

रुचि दीक्षित
असिस्टेंट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
अकबरपुर पी0जी0 कॉलेज
अकबरपुर, कानपुर देहात

इस रहस्य जगत में न जाने कितने रहस्य छिपे हुए हैं। मानव चूँकि एक बौद्धिक और जिज्ञासु प्राणी है अतः अपनी इसी जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण वह उन रहस्यों का उद्घाटन करने के लिए या अज्ञात वस्तुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए तत्पर रहता है। यह तत्परता उसकी सभ्यता ज्ञान और प्रगतिशील प्रगति की परिचायिका है। मानव में नवीनता को ढूँढ़ निकालने की और अज्ञात को खोज निकालने की प्रवृत्ति स्वाभाविक है। इस प्रयत्नशीलता का उद्देश्य ज्ञान का विस्तार और स्पष्ट ज्ञान का स्पष्टीकरण तथा विद्यमान ज्ञान का सत्यापन होता है। इसी को शोध कहते हैं। शोध प्रविधि नवीन ज्ञान की प्राप्ति का एक व्यवस्थित साधन और घटनाओं के अन्तःस्थल तक पहुँचने का अमूर्त अस्त्र है। जब इस अस्त्र का प्रयोग सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति उसके स्पष्टीकरण तथा सत्यापन के लिए किया जाता है तो उसी को सामाजिक शोध कहते हैं। वास्तव में शोध का तात्पर्य किसी विशेष जिज्ञासा के संदर्भ में इस प्रकार गहन अध्ययन करना है जिनमें नये सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सके अथवा वर्तमान दशाओं के अन्तर्गत प्राचीन सिद्धान्तों की सत्यता का मूल्यांकन किया जा सके।

इस दृष्टिकोण से सामाजिक शोध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें हम सर्वप्रथम किसी समस्या, व्यवहार अथवा घटना से सम्बन्धित आधारभूत तथ्यों का अवलोकन करके उसकी सामान्य प्रकृति को समझने का प्रयास करते हैं जो एक विशेष घटना से सम्बन्धित कार्यकारण के सम्बन्ध को स्पष्ट कर सके। दूसरे शब्दों में सामाजिक जीवन में व्याप्त नियमों एवं वास्तविक प्रवृत्तियों की खोज करना ही सामाजिक शोध है। सामाजिक अनुसंधान अथवा शोध को एक ऐसे वैज्ञानिक प्रयत्न के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका उद्देश्य तार्किक और क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नये तथ्यों का अन्वेषण अथवा पुराने तथ्यों की परीक्षा और सत्यापन उनके क्रमों, पारस्परिक संबंधों, कार्यकारण की व्याख्या तथा उन्हें संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है।

सामाजिक शोध जीवन के विभिन्न अंगों के विषय में अध्ययनरत् करने की एक वैज्ञानिक योजना है। चूँकि यह वैज्ञानिक है इसलिए इसके अन्तर्गत समस्त अनुसंधान कार्य वैज्ञानिक पद्धति से होता है। सामाजिक शोध का तात्पर्य केवल नये सिद्धान्तों का निर्माण करना ही नहीं है बल्कि पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता को जानने अथवा विभिन्न घटनाओं को संचालित करने वाले नियमों को जानने के सभी प्रयत्नों की व्यवस्थित प्रणाली को ही हम शोध के नाम से सम्बोधित करते हैं।

स्पष्ट है कि सामाजिक शोध एक ऐसी वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा सामूहिक जीवन में व्याप्त विभिन्न प्रकार की घटनाओं की प्रकृति उनके अन्तर्सम्बन्धों तथा उनमें अन्तर्निहित प्रक्रियाओं का पक्षपात रहित रूप से विश्लेषण करके एक सामान्य सिद्धान्त का प्रतिपादन करना है।

ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-4* July -2018
Anthology : The Research

शोध पत्र लेखन के विविध आयाम

माधवी शर्मा
प्राचार्या
डी.बी.पी.जी.कॉलेज
खेरली, अलवर, राजस्थान

शोध की शुरूआत किसी विचार से होती है। इस विचार की उत्पत्ति वैसे तो प्रत्यक्ष रूप से किसी घटना को देखकर या अन्तः प्रज्ञा से हो सकती है। शोध सम्बन्धी प्रारम्भिक विचार में कब, क्यों, क्या, कैसे और कहाँ का समाधान होना चाहिये।

शोध समस्या को एक शोध पत्र में निश्चित आकार देने के लिये उपलब्ध साहित्य और सिद्धान्तों का अध्ययन, मनन करना चाहिये। जिस विषय पर हम शोध कर रहे हैं क्या उस विषय एवं पर पहले भी शोध हो चुके हैं, उसके क्या निष्कर्ष रहे, उसमें किन पद्धतियों का प्रयोग किया गया? शोधार्थी के लिये शोध विषयक समस्या के लिये प्रशस्त मार्ग दर्शक हो सकते हैं। शोधार्थी साक्ष्यों, दस्तावेजों, पुरातत्व सामग्री आदि के अध्ययन के सहयोग से शोध पत्र को लिखने में कणवत्ता होती है।

एक शोध पत्र किसी भी विषय पर व निजी अध्ययन से प्रार्किता तथा शोध प्रविधि के ज्ञान से विषय सामग्री को निर्धारित प्रारूप में निबद्ध कर प्रस्तुत करना है। शोध पत्र लेखन में लेखक के अपने द्वारा चुने गये विषय पर गहन अध्ययन और अनुसंधान के द्वारा अध्ययन सामग्री को प्रस्तुत करता है।

शोध पत्र के शीर्षक का जब हमारे द्वारा चयन किया जाता है तो इस बात का ध्यान रखा जाये कि शीर्षक विषय वस्तु से सम्बन्धित होना चाहिये।

आजकल जो शोध पत्र लेखन का एक प्रारूप तैयार कर रखा है, उसके अनुरूप शोध पत्र लिखना थोड़ा मुश्किल होता है लेकिन फिर अपनी विषय वस्तु को मात्र उस प्रारूप में अव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत न कर, तारतम्यता के साथ प्रस्तुत किया जाये।

भूमिका इस तरह की होनी चाहिये कि किसी भी विषय से सम्बन्धित शोधार्थी या शिक्षाविद् उस शोध पत्र को पढने के लिए जिज्ञासित हो।

शोधपत्र का उद्देश्य ऐसा हो कि पाठकों का ध्यान सहज ही आकृष्ट हो सके। मूल शोधपत्र को पृथक्–पृथक् अनुच्छेद में लिखे। शोधपत्र में सांख्यकीय डाटा, सम्बन्धित महत्वपूर्ण विविरण, ग्राफ, पाठ्यांश, प्रमाण आदि के द्वारा भी मुख्य विषय का प्रतिपादन किया जा सकता है।

शोध पत्र का निष्कर्ष ही उसका मूल्य है क्योंकि पाठक शीर्षक पठक सीधे निष्कर्ष पर पहुॅचता है इसलिए निष्कर्ष इतना प्रभावोत्पादक होना चाहिए कि वह पूर्ण शोध लेख को पढने के लिए उद्यत हो जाये।